ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya

(A Center University Established by Parliament by Act No. 3 of 1997)

बी.एड. पाठ्यक्रम

सत्र - 2021-23

पाठ्यक्रम कोड : BEd - 012

द्वितीय सेमेस्टर

पंचम पाठ्यचर्या

पाठ्यचर्या कोड : BEd- 025

पाठ्यचर्या का शीर्षक : विद्यालय विषय शिक्षण II (संस्कृत शिक्षण)

दूर शिक्षा निदेशालय

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

पोस्ट- हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा - 442001 (महाराष्ट्र)

द्वितीय सेमेस्टर : शिक्षा 025 संस्कृत शिक्षण

प्रधान संपादक

प्रो. गिरीश्वर मिश्र
कुलपति
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

प्रो. अरबिंद कुमार झा
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

पाठ्यचर्या निर्माण समिति

प्रो. अरबिंद कुमार झा
अधिष्ठाता, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. गोपाल कृष्ण ठाकुर
सह प्रोफ़ेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

श्री ऋषभ कुमार मिश्र
सहा प्रोफेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

संपादक मंडल

प्रो. अरबिंद कुमार झा
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. दीपक पुनसे
सह प्रोफ़ेसर
स्वालंबी शिक्षण महाविद्यालय,वर्धा

डॉ. रामार्चा पाण्डेय
सह प्रोफ़ेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

डॉ. गुणवंत सोनोने
सहा प्रोफ़ेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

श्री धर्मेंद्र शंभरकर
सहा प्रोफ़ेसर, शिक्षा विद्यापीठ
म.गां.अं.हिं.वि., वर्धा

इकाई लेखन

समन्वयक - डॉ. भरत कुमार पंडा

इकाई -1
डॉ. भरत कुमार पंडा

इकाई -2
डॉ. भरत कुमार पंडा

इकाई -3
डॉ. भरत कुमार पंडा

इकाई-4
डॉ. भरत कुमार पंडा

इकाई- 5
डॉ. भरत कुमार पंडा

प्रधान संपादक की कलम से.....

संपादक की कलम से.....

अनुक्रम

क्र.सं.	इकाईयों का नाम	पृष्ठ संख्या
1.	इकाई 1: संस्कृत भाषा शिक्षण	6-22
2.	इकाई 2: संस्कृत शिक्षण पद्धतियाँ	23-32
3.	इकाई 3: संस्कृत भाषा के विभिन्न विधाओं का शिक्षण	33-49
4.	इकाई 4: पाठ्य पुस्तक एवं सहगामी क्रिया	50-71
5.	इकाई 5: मूल्यांकन पद्धति	72-83

इकाई –1

संस्कृत भाषा शिक्षण

इकाई की रूपरेखा

1.0. इकाई परिचय
1.1. शिक्षण के उद्देश्य
1.2. विषय विवेचन
  1.2.1. संस्कृत भाषा का महत्व
    1.2.1.1. वैज्ञानिक महत्व
    1.2.1.2. सांस्कृतिक महत्व
    1.2.1.3. व्यावहारिक महत्व
    1.2.1.4. आधुनिक भारत में संस्कृत का महत्व
  1.2.2. संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य
    1.2.2.1. संस्कृत शिक्षण के सामान्य उद्देश्य
    1.2.2.2. संस्कृत भाषा शिक्षण के स्तरानुसार उद्देश्य
      1.2.2.2.1. प्रारम्भिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य
      1.2.2.2.2. मध्य स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य
      1.2.2.2.3. उच्च स्तर पर संस्कृत-शिक्षण के उद्देश्य
    1.2.2.3. संस्कृत शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य
      1.2.2.3.1. ज्ञानात्मक उद्देश्य
      1.2.2.3.2. कौशलात्मक उद्देश्य
      1.2.2.3.3. प्रयोगात्मक उद्देश्य
      1.2.2.3.4. अभिवृत्त्यात्मक उद्देश्य
  1.2.3. विविध समितियों की रिपोर्ट में संस्कृत भाषा
    1.2.3.1. ताराचन्दसमिति
    1.2.3.2. मुदलियार शिक्षा आयोग – (1952-53)
    1.2.3.3. कोठारी आयोग – (1964-66)
    1.2.3.4. सुनीति कुमार चटर्जी आयोग – 1956-56
  1.2.4. पाठयक्रम में संस्कृत भाषा का स्थान
    1.2.4.1. प्रथम दृष्टिकोण
    1.2.4.2. द्वितीय दृष्टिकोण
    1.2.4.3. तृतीय दृष्टिकोण
  1.2.5. भाषा शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त
    1.2.5.1.अभ्यास का सिद्धान्त
    1.2.5.2. स्वाभाविकता का सिद्धान्त

1.2.5.3. प्रभाव का सिद्धान्त
1.2.5.4. रुचि का सिद्धान्त
1.2.5.5. अभिप्रेरणा का सिद्धान्त
1.2.5.6. क्रियाशीलता का सिद्धान्त
1.2.5.7. जीवन समन्वय का सिद्धान्त
1.2.5.8. वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त
1.3. सारांश
1.4. अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर
1.5. शब्दावली
1.6. कार्य आवंटन
1.7. क्रियाएं
1.8. प्रकरण अध्ययन (केस स्टडी)
1.9. संदर्भ पुस्तकें

1.0. इकाई परिचय

अनादि काल से संस्कृत भाषा हमारी सांस्कृतिक चिन्तन धाराओं का संवाहक है। जीवन में प्रतिपल प्रयुज्यमान ज्ञान का भण्डार है संस्कृत भाषा एवं तन्निष्ट साहित्य। विज्ञान, कला, कृषि, खगोल शास्त्र, स्थापत्यविद्या, वास्तुविद्या, औषध, गणित, अर्थशास्त्र, प्रवन्धन शास्त्र आदि अनेक नित्य जीवनोपयोगी विषयों का ज्ञान संस्कृत भाषा अध्यापन से प्राप्त किया जा सकता है। अतः इस अध्याय में संस्कृत भाषा का विभिन्न महत्वों के साथ संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का स्तरानुसार एवं विशिष्टतानुसार बताया गया है। शिक्षम क्रम में संस्कृत भाषा का स्थान एवं शिक्षण सिद्धान्तों को भी स्पष्ट किया गया है।

1.1. शिक्षण के उद्देश्य

इस इकाई के पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित में सक्षम होंगे :

1. संस्कृत भाषा के विभिन्न महत्वों का ज्ञान प्राप्त करना।
2. संस्कृत भाषा शिक्षण केविभिन्न उद्देश्यों का ज्ञान प्राप्त करना।
3. संस्कृत भाषा का अन्य भारतीय भाषाओं के साथ संम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त करना।
4. संस्कृत भाषा का पाठ्यक्रम में स्थान का ज्ञान प्राप्त करना।
5. शिक्षण के विभिन्न सिद्धान्त का ज्ञान प्राप्त करना।

1.2. विषय विवेचन

1.2.1. संस्कृत भाषा का महत्व

भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाण भारती।
तस्मादपि काव्यं मधुरं तस्मादपि सुभासितम्।।

विश्व में संस्कृत भाषा प्राचीनतम भाषा है। भारतीय संकृति का किसी भी विषय का ज्ञान के लिए संस्कृत के आलावा कोई पर्याय नहि है। अति प्राचीन काल से आज तक संस्कृत के माध्यम से संस्कृति की धारा चली आरही है। अतः संस्कृत भाषा का भारतीय जीवन पद्धति का हर एक पहलु के उपर प्रभाव है। केबल उतना ही नही संस्कृत भाषा का वैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, व्यवहारिक, ऐतिहासिक, एवं राजनैतिक महत्व भी अनिर्वचनीय है। उन में से कुछ महत्वों को स्पष्ट कर रहे हैं।

1.2.1.1. वैज्ञानिक महत्व

संस्कृत भाषा अपने आप में ही एक विज्ञान है एवं संस्कृत भाषा साहित्य वैज्ञानिक तत्वों का भण्डार है। भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से संस्कृत ही एक ऐसी भाषा है जो परिपूर्ण है। वर्ण की उत्पत्ति, वर्णों के उच्चारण स्थान-प्रयत्नों का निर्धारण, वर्णों से शब्दों का निर्माण, नूतन शब्द निर्माण कला, वर्णो से शब्द, शब्दों से वाक्य निर्माण एवं वाक्य विन्यास आदि भाषा वैज्ञानिक स्तर पर संस्कृत भाषा विश्व के भाषाओं का मार्ग दर्शन करता है। चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में अश्विन कुमार ,वरूण, रूद्र आदि देवता वैद्य थे। चरक संहिता, सुश्रृत संहिता, आयुर्वेद आदि ग्रन्थ सराहनीय स्थान ले रखें है। शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में धन्वन्तरि, वाग्भट्ट, जीवक आदिओं का प्रसिद्धि आज भी बरकरार है। पशु चिकित्सा का जनक शालिहोत्र को ही माना जाता है। भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में कणाद का परमाणु तत्व, वाचस्पति का प्रकाश तत्व, दिग्दर्शन तत्व, जलतत्व, भूमितत्व, आदि के ऊपर आज भी अनुसंधान किए जा सकते है। अतः संस्कृत भाषा का वैज्ञानिक महत्व आधुनिक विज्ञान से कही कम नही है।

1.2.1.2. सांस्कृतिक महत्व

भारतीय सांस्कृतिक विरासत का आधार संस्कृत ही है। भारतीय आदर्श, मूल्य, एवं परंपराओं का स्रोत संस्कृत शास्त्र ही है। भारतीय जीवन शैली में आनेवाले संस्कार, आचार, व्यवहार, अनुष्ठान, आदि संस्कृत निर्देशित है। आचार्यो देवो भव, अतिथी देवो भव, मातृ देवो भव आदि भारतीय परंपरा की अस्मिता का आधार उपनिषद ही है। वर्णाश्रम व्यवस्था कर्म महत्व को स्पष्ट करता है। धर्मार्थकाममोक्ष आदि पुरुषार्थ चतुष्टय सामाजिक कुशलता एवं शौचता के रूप में अनुपम उदाहरण ही है। ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास आदि आश्रम व्यवस्था भारतीय जीवन शैली को संयमित एवं सुखदायी बनाता है। "उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्यवरान् निबोधत" आदि उपनिषद वाणी मनुष्य को सदैव उच्चाकाक्षा व लक्षनिष्ठ बनाता है। अतः संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति का प्राण है।

1.2.1.3. व्यावहारिक महत्व

संस्कृत भाषा व्यक्ति को व्यष्टिगत से लेकर परमेष्टिगत तक आचार व्यवहार, दायित्व, कर्त्तव्यों को सिखाता है। स्मृति ग्रन्थों में दैनदिन व्यवहारों के सुचारू संपादन के लिए विधियाँ वतायी गयी है। रामायण, महाभारतादि पुराणों में इतिहास को भली भाँति समझने का अवसर प्रदान कि है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र जीवन के कई पहलूओं को संयमित करता है। भर्तृहरि, चाणक्य आदि के नीति शास्त्र जीवन के हर क्षण में मार्ग दर्शन करते है। कल्हण का राजतरंगिणी, विल्हण का विक्रमांकदेवचरितम् राजनैतिक व्यवहारों को प्रतिष्ठापित करते हैं। "ईशावास्यमिदं सर्वम्", "सत्यमेव जयते", आदि उपनिषद वाक्य राष्ट्रीय संहति का प्रतीक है। वेदों में प्रयुक्त शान्ति मन्त्र संस्कृत का अंतरराष्ट्रीय महत्व को प्रतिपादित करते हैं। अतः व्यावहारिक क्षेत्र में भी संस्कृत भाषा एवं संस्कृतनिष्ठ शास्त्र तत्व सर्वोपरि है।

1.2.1.4.आधुनिक भारत में संस्कृत का महत्व

01. संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति की मुल स्रोत
02. प्राचीन भारतीय समाज व्यवस्था ज्ञान
03. उत्कृष्ट साहित्य कला कृतिओं का ज्ञान
04. संस्कृत साहित्यों में निहिति श्रेष्ठ विचारों का ज्ञान
05. भारतीय संस्कृति का ऐतिहासिक आलेख का ज्ञान
06. संस्कृत भाषा से साहित्य निर्माण की प्रेरणा
07. संस्कृत भाषा की विश्व भाषा से सम्बन्ध
08. व्यवहार का वास्तविक ज्ञान
09. समृद्ध दार्शनिक ज्ञान
10. राजनैतिक ज्ञानों का भण्डार
11. काव्यशास्त्रों का समद्ध साहित्यों का भण्डार
12. आयुर्वेदिक आदि चिकित्सा ग्रन्थ संस्कृत में लिखे गए हैं।

अन्य भाषाओं के साथ सम्बन्ध–

सभी भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा है। अतः सभी भारतीय भाषाएँ संस्कृत से निकली हुई है। भारतीय भाषाओं की शब्द शक्ति संस्कृत का ही देन है। संस्कृत व्याकरण की संरचना से सभी भाषाएँ मजबुत हुई हैं। संस्कृत के भाषा शैली से प्रभावीत भाषाएँ समृद्ध हुई हैं। अधोलिखित रेखाचित्र से भारतीय भाषाओं की संस्कृत भाषा से सम्बन्ध स्पष्ट होता है।

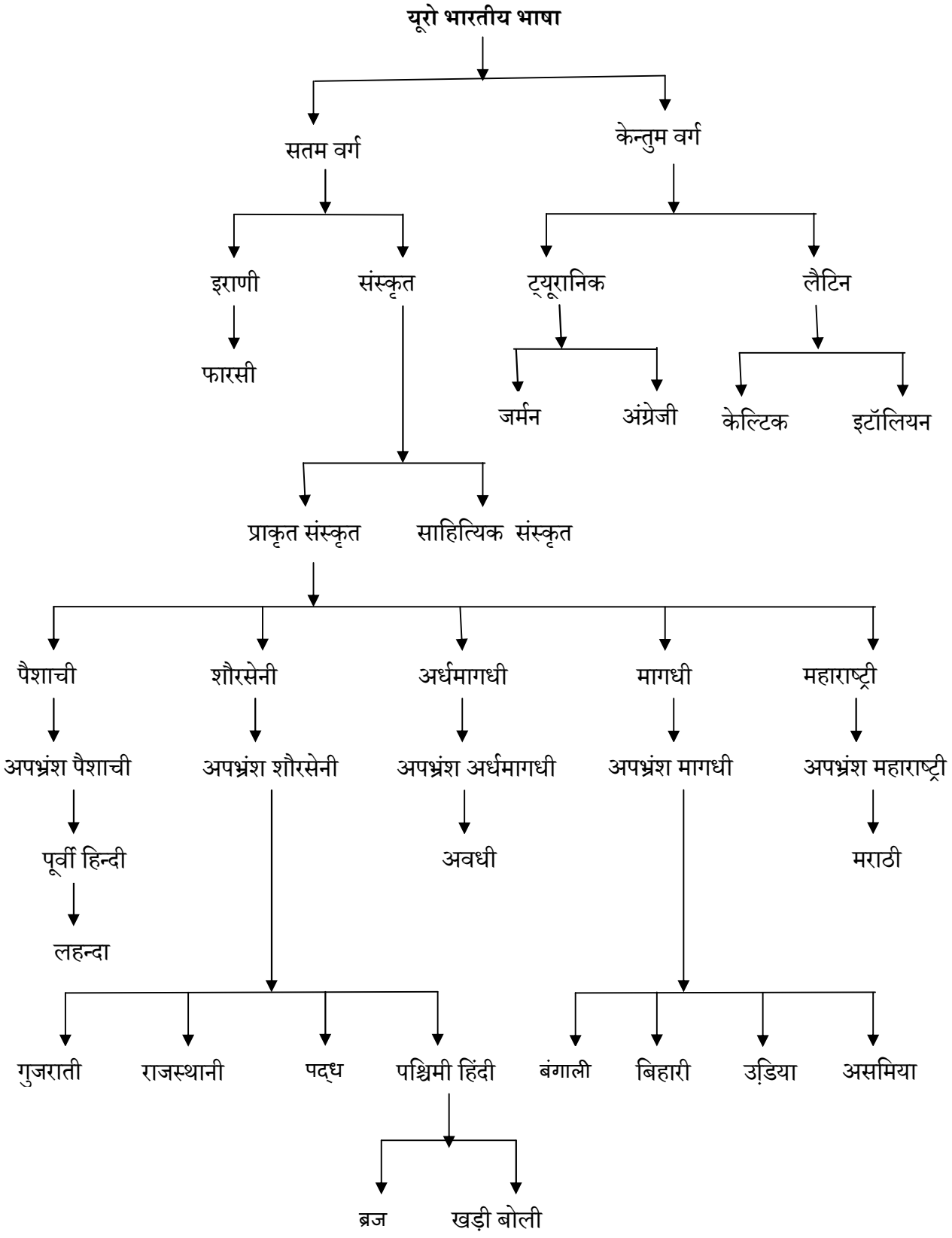
यूरो भारतीय भाषा
सतम वर्ग
केन्तुम वर्ग
इराणी
संस्कृत
ट्यूरानिक
लैटिन
फारसी
जर्मन
अंग्रेजी
केल्टिक
इटॉलियन
प्राकृत संस्कृत
साहित्यिक संस्कृत
पैशाची
शौरसेनी
अर्धमागधी
मागधी
महाराष्ट्री
अपभ्रंश पैशाची
अपभ्रंश शौरसेनी
अपभ्रंश अर्धमागधी
अपभ्रंश मागधी
अपभ्रंश महाराष्ट्री
पूर्वी हिन्दी
अवधी
मराठी
लहन्दा
गुजराती
राजस्थानी
पद्ध
पश्चिमी हिंदी
बंगाली
बिहारी
उड़िया
असमिया
ब्रज
खड़ी बोली

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. संस्कृत भाषा का महत्व स्पष्ट करें?
2. अन्य भारतीय भाषाओं के साथ संस्कृत का सम्बन्ध सम्बन्ध स्पष्ट करें?

1.2.2. संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य

2.2.2.1.संस्कृत शिक्षण के सामान्य उद्देश्य

01. व्याकरण का सन्धि, कारक शब्दरूप, धातुरूपों को ज्ञान प्रदान करना
02. गद्यांशों का शुद्धोच्चारण के साथ पढने की क्षमता उत्पन्न करना
03. सरल श्लोकों को शुद्धोच्चारण से समर्थ हो
04. गद्यांशों और श्लोकों को शुद्ध संस्कृत में लेखन सामर्थ्य निर्माण करना
05. लघु वाक्यों को संस्कृत में अनुवाद करने में समर्थ होना
06. संस्कृत भाषा के लघु वाक्यों को मातृभाषा में अनुवाद करने में समर्थ बनाना
07. संस्कृत अनुच्छेदों को उपयुक्त भाव से विराम चिन्हों के साथ पठन की क्षमता उत्पन्न करना
08. पद्यों को पढकर आनन्द अनुभूति प्राप्त करना
09. संस्कृत से मातृभाषा, मातृभाषा से संस्कृत में अनुवाद की योग्यता सम्पादन करना
10. पञ्चतन्त्र, हितोपदेश आदि लघु कथा साहित्यों का अर्थ समझने साथ पठन की क्षमता निर्माण करना
11. व्याकरण-सन्धि समास आदियों का पूर्ण ज्ञान।
12. संस्कृत पद्यों कागति-यति- लय-ताल आदि साथ के सस्वर वाचन क्षमता निर्माण करना
13. संस्कृत भाषा से निबन्ध लेखन की क्षमता निर्माण करना
14. प्रौढ वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद की योग्यता सम्पादन करना
15. संस्कृत पुस्तकों के सारांश एवं समीक्षा लेखन में समर्थ बनाना
16. व्याकरण के सन्धि, समास, वृतान्त, कारक, धातु, शब्दों आदि के ऊपर पूर्ण अधिकार प्राप्त करना।
17. संस्कृत के कथाओं को पढकरकारकों को समझने की क्षमता उत्पन्न करना।

1.2.2.2. संस्कृत भाषा शिक्षण के स्तरानुसार उद्देश्य

हमारे देश में संस्कृत का पठन-पाठन दो प्रकार से होता है- एक तो पाठशालाओं में, दूसरी वर्तमान शिक्षा प्रणाली में पाठशाओं में। संस्कृत की कथाएँ 'प्रथमा' से आरम्भ होती है और आचार्य तक चलती है। प्रथमा कक्षा में छात्र प्रारम्भिक विद्यालय मातृभाषा अध्ययन करने के बाद प्रविष्ट होता है और इसलिए प्रथमा को जूनियर हाईस्कूल के समकक्ष माना जाता है इसके बाद पूर्व-मध्यमा को हाईस्कूल, उत्तर माध्यम को

इण्टरमीडियट, शास्त्री कोबी. ए. तथा आचार्य को एम. ए. परीक्षा के समकक्ष माना जाता है। उत्तर प्रदेश में सभी पाठशालाए वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बन्ध है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में संस्कृत का अध्ययन विभिन्न राज्यों में विभिन्न कक्षाओं से आरम्भ होता है। प्राथमिक विद्यालयों में संस्कृत का अध्यापन नहीं होता है। संस्कृत भाषा का पठन-पाठन उत्तर प्रदेश में कक्षा 6 से प्रारम्भ होता है और एम. ए. तक चलता है। संस्कृत भाषा शिक्षण के तीन स्तर –

1.2.2.2.1. प्रारम्भिक स्तर (कक्षा 6 से कक्षा 8 तक)

1.2.2.2.2. मध्य स्तर (कक्षा 9 से कक्षा 12 तक)

1.2.2.2.3. उच्च स्तर (विश्वविद्यालय की अन्तिम परीक्षा तक हो सकती है)

1.2.2.2.1. प्रारम्भिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य

प्रारम्भिक स्तर अर्थात् कक्षा 6, 7 और 8 के छात्र बाल्यावस्था के अन्तिम भाग या किशोरावस्था में पदार्पण करने तैयारी में रहते है। जहाँ पर उनके मन में बड़ी उथल-पुथल रहती है, यहाँ उन्हें उपयुक्त आदर्शो की आवश्यकता भी पड़ती है। आदर्शो का मार्गदर्शक करते हुए प्रारम्भिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण की निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित है-

1. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे संस्कृत भाषा में लिखे हुए सरल गद्य-खण्डों को शुद्ध-शुद्ध पढ़ सकें।
2. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे सरल संस्कृत श्लोकों का शुद्ध उच्चारण करते हुए पाठ पढ़ सके।
3. उन्हें कुछ महत्वपूर्ण श्लोकों की प्रेरणा देना।
4. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे संस्कृत के कठिन से कठिन गद्य खण्डों एवं श्लोकों के मुद्रित रूप को देखकर उन्हें ठीक-ठाक अपनी पुस्तकओं में लिख सकें।
5. छात्रों में यह योग्यता भी उत्पन्न करना कि वे व्यवस्था किए हुए श्लोकों को उनके मुद्रित रूप के देखे बिना शुद्ध लिख सकें।
6. उन्हें श्रुतलेख लिखने का अभ्यास कराना।
7. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे मातृभाषा के सरल नामों का संस्कृत में अनुवाद कर सकें।
8. संस्कृत के सरल गद्य-खण्डों एवं सरल श्लोकों को समझने की योग्यता प्रदान करना।
9. छात्रों को यह योग्यता प्रदान करना कि वे आवश्यकतानुसार सरल संस्कृत वाक्यों एवं श्लोकों का मातृभाषा में अनुवाद कर सकें।

1.2.2.2.2. मध्य स्तर पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य

मध्य स्तर पर आने प्रारम्भिक स्तर पर कक्षा 6, 7 व 8 में संस्कृत को पढ़ चुके होते है, उनमें यह योग्यता आ जाती है कि वे संस्कृत के सरल गद्य खण्डों को शुद्ध-शुद्ध पढ़ सकें। इस स्तर पर संस्कृत साहित्य भाषा की शिक्षण की जानकारी देनी चाहिए। अत: इस स्तर पर संस्कृत शिक्षण के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है-

1. संस्कृत के सरल ही नहीं, कठिन गद्य-खण्डों को उचित विराम एवं शुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ने की क्षमता प्रदान करना जिससे छात्र संस्कृत भाषा में लिखे हुए बड़े-से बड़े वाक्यों को भी उचित अन्वितियों में विभक्त करके पढ़ सकें और कहीं ऐसा न हों कि वे ''अस्ति गोदावरी तीरे विशाल: शाल्मली तरु'' के स्थान पर ''अस्तिगोदावरी तीरेवि शाल.....'' जैसा पढ़कर गद्य-खण्ड को निरर्थक कर दें।
2. संस्कृत श्लोकों को उचित लय, मात्रा एवं विराम का ध्यान रखकर पढ़ने की योग्यता प्रदान करना जिससे वे मालिनी, शिखरिणी, द्रुत-विलम्बित, इन्द्रवज्रा, भुजंगप्रयात आदि छन्दों के पाठ में अन्तर कर सकें।
3. संस्कृत के सरल साहित्य से छात्रों को परिचित कराया जाय जिससे वे संस्कृत साहित्य के अक्षय कोष में कुछ रत्न स्वयं प्राप्त कर सकें और आनन्द की अनुभूति कर सकें।
4. संस्कृत के महत्वपूर्ण श्लोकों को कण्ठस्थ करने की प्रेरणा इस स्तर पर भी दी जाय, ताकि मातृभाषा के माध्यम से अपने वार्तालाप में आवश्यकता पड़ने पर अपनी बात की सम्पुष्टि में वाणी को प्रभावोत्पादक बनाने की दृष्टि से संस्कृत के श्लोकों का उद्धरण दे सकें।
5. संस्कृत साहित्य के सरल अंशों को मातृभाषा में अनूदित करने की क्षमता प्रदान करना जिससे वे जन-समुदाय को संस्कृत-साहित्य के अमृत का पान कर सकें।
6. मातृभाषा के सरल अनुच्छेदों एवं सामान्य वाक्यों की संस्कृत में अनूदित करने की योग्यता प्रदान करना।
7. सरल विषयों पर संस्कृत भाषा में निबन्ध के रूप में कुछ वाक्य लिखने की क्षमता प्रदान करना।
8. यदि सम्भव हो तो संस्कृत में कुछ सरल वाक्यों में बोलने की क्षमता प्रदान करना जिससे वे अभीष्ट अवसरों पर सरल रीति से संस्कृत भाषा में कुछ वाक्य शुद्ध रूप में बोल सकें।

1.2.2.2.3. उच्च स्तर पर संस्कृत-शिक्षण के उद्देश्य

उच्च स्तर पर संस्कृत –शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित होने चाहिए-

1. सरल एवं कठिन सभी प्रकार के गद्य-खण्डों को उचित विराम एवं उच्चारण सहित पढने की योग्यता उत्पन्न करना।
2. सभी प्रकार के श्लाकों का अभीष्ट लय के अनुसार पाठ करने की योग्यता उत्पन्न करना।
3. संस्कृत के अगाध साहित्य का अवगाहन करने की क्षमता प्रदान करना।
4. भाषा एवं साहित्य के प्रति अनुसनधनात्मक दृष्टिकोण प्रदान करना।
5. संस्कृत साहित्य का मातृभाषा में अनुवाद करने की क्षमता प्रदान करना।
6. मातृभाषा के सभी प्रकार के वाक्य–साँचों को संस्कृत में अनुदित करने की योग्यता उत्पन्न करना।
7. आवश्यकतानुसार उचित अवसरों पर संस्कृत भाषा में बोलने की क्षमता प्रदान करना।

8. संस्कृत भाषा में पत्र-लेखन, निबन्ध-लेखन, संवाद-प्रेषण आदि की योग्यता उत्पन्न करना।

उपर्युक्त विवरण को ध्यान से देखने पर पता लगता है कि संस्कृत भाषा को पढ़ाने के उद्देश्य निम्न स्तरों पर भिन्न अवश्य हैं, किन्तु मूल रूप में सभी भाषा के कौशलों और साहित्य के आनन्द से सम्बन्धित हैं। किसी भी भाषा को पढ़ाने के निम्नलिखित मूल उद्देश्य होते हैं-

1. बोलना
2. पढ़ना
3. सुनना
4. लिखना

वस्तुत: हम किसी भी भाषा को इसलिए पढ़ते हैं जिससे कि हम अपने भावों को दूसरों तक पहुँचा सकें और दूसरों के भावों को ग्रहण कर सकें। इस दृष्टि से भाषा के मूल रूप में केवल दो उद्देश्य ठहराते हैं-

1. विचारों की अभिव्यक्ति
2. विचारों को समझना

भावभिव्यक्ति दो प्रकार से हो सकती है-

1. बोलकर
2. लिखकर

इसी प्रकार विचार-ग्रहण भी दो प्रकार से हो सकता है-

1. मौखिक रूप से व्यक्त विचारों को सुनकर
2. लिखित रूप से व्यक्त विचारों को पढ़कर।

इसलिए ऊपर भाषा के चार उद्देश्यों का उल्लेख किया गया है। इन चारों उद्देश्य के अन्तर्गत भाषा संबंधी अनेक क्रियाओं का ज्ञान कराना आवश्यक हो जाता है। इनमें क्रियाओं पहले आनी चाहिए, कुछ बाद में। इसलिए विभिन्न स्तरों पर संस्कृत-शिक्षण के उद्दश्य भिन्न बनाये गए हैं। इन चारों मूल उद्देश्यों को भाषा संम्बधी चार कौशल भी कहा जाता है।

1.2.2.3. संस्कृत शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य

भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों पर विचार करते समय आधुनिक विद्वान इन उद्देश्यों को ज्ञानपरक, कौशलपरक और अभिवृत्तिपरक रुपों में वर्गीकृत करते हैं। संस्कृत शिक्षक के उद्देश्यों से भी निम्नलिखित रुपों में वर्गीकृत किया जा रहा है-

1.2.2.3.1. ज्ञानात्मक उद्देश्य

1. छात्राध्यापकों को संस्कृत भाषा के महत्व तथा भाषा शिक्षण के उद्देश्यों से अवगत कराना।

2. अद्यतन देवनागरी लिपि और संस्कृत वर्तनी के मानक रूप से अवगत कराना तथा उनकी त्रुटियों से सम्बन्धित समस्याओं एवं समाधान के उपायों की जानकारी देना।
3. संस्कृत शिक्षण के लक्ष्यों की सम्प्राप्ति के लिए प्रभावी साधनों, विधियों एवं उद्देश्य मूलक उपागमों से अवगत कराना।
4. संस्कृत शिक्षण के स्तर को समुत्रयन करने की दृष्टि से छात्राध्यापकों की भाषा तथा साहित्य सम्बन्धी योग्यताओं का समुत्रयन करना।
5. कक्षा नौ से बारह तक के संस्कृत पाठ्य विवरण तथा पाठों को विश्लेषण करना सिखाना और तदनुसार शिक्षण बिन्दुओं के चयन की योग्यता विकसित करना।
6. संस्कृत साहित्य की अधुनातन प्रवृत्तियों से अवगत कराना।

1.2.2.3.2. कौशलात्मक उद्देश्य

1. संस्कृत के प्रभावी शिक्षण के लिए भाषा कौशलों एव विभिन्न साहित्यिक विधाओं की शिक्षण विधियों एवं तकनीकों की जानकारी करना।
2. अद्यतन देवनागरी लिपि और संस्कृत वर्तनी के मानक रूप से अवगत कराना तथा उनकी त्रुटियों से सम्बन्धित समस्याओं एवं समाधान के उपायों की जानकारी देना।
3. संस्कृत शिक्षण के लक्ष्यों की सम्प्राप्ति के लिए प्रभावी साधनों, विधियों एवं उद्देश्य मूलक उपागमों से अवगत कराना।
4. संस्कृत शिक्षण के स्तर को समुन्यन करना।
5. कक्षा नौ से बारह तक के संस्कृत पाठ्य तथा पाठों की विश्लेषण करना सिखाना और तदनुसार शिक्षण बिन्दुओं के चयन की योग्यता विकसित करना।
6. संस्कृत साहित्य की अधुनातन प्रवृत्तियों से अवगत कराना।

1.2.2.3.3. प्रयोगात्मक उद्देश्य

1. संस्कृत के प्रभावी शिक्षण के लिए भाषा कौशलों एवं विभिन्न साहित्यिक विधाओं की शिक्षण विधियों एवं तकनीकी के प्रयोग की क्षमता विकसित करना।
2. अध्यापकों में स्वाध्याय एवं अध्ययन कुशलताओं को विकसित करना।
3. भाषा शिक्षण से सम्बन्ध सह-शैक्षणिक क्रियाओं के आयोजन की क्षमता विकसित करना।
4. भाषा शिक्षण के लिए अल्पव्ययी श्रव्य-दृश्य शैक्षणिक उपकरणों का निर्माण और करने और उन संचार माध्यमों तथा आधुनिक शैक्षिक उपकरणों का अपने शिक्षण में उपयोग करने की योग्यता विकसित करना।

5. मूल्यांकन तकनीकों के प्रयोग की योग्यता विकसित करना ताकि मूल्यांकन के निष्कर्षो के आधार पर छात्राध्यापक अपनी शिक्षण प्रणाली को सुधार सकें।

1.2.2.3.4. अभिवृत्त्यात्मक उद्देश्य

1. संस्कृत शिक्षण सम्बन्धी चुनौतियों के प्रति जागरुकता विकसित करना।
2. संस्कृत शिक्षण व अधिगम से सम्बन्धित ज्ञान और कौशलों को अद्यतन बनाये रखना और उनके समुत्रयन की मनोवृत्ति को विकसित करना।
3. केन्द्रिक पाठ्यचर्या के कुछ प्रमुख तत्वों से सम्बन्धित मूल्यों एवं सद्वत्तियों के प्रति चेतना विकसित करना ताकि पाठों को पढ़ाते समय वे अपने छात्रों में उन्हें विकसित कर सकें।

संस्कृत-शिक्षण की दृष्टि से आरम्भ में भाषा के चारों उद्देश्यों के अंर्तगत सरल क्रियाएँ रखी गयी हैं। बाद में कुछ कठिन क्रियाओं का समावेश किया गया हैं। इस अन्तर भी देख लेना उचित होगा।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. भाषा के वैयक्तिक भिन्नता और जीवन समन्वय सिद्धान्तों को बताइए?
2. भाषा के अभ्यास और स्वाविकता का सिद्धान्त बताइए?

1.2.3. विविध समितियों की रिपोर्ट में संस्कृत भाषा

शिक्षा में मातृभाषा, भाषा, विदेशी भाषा आदि भाषाओं की अपना अपना स्थान है। बालक के स्वाभविक और मनोविज्ञानिक विकास तथा सामाजिक और राष्ट्रिय आवश्यकताओं की दृष्टि से मातृभाषा, राष्ट्रभाषा तथा संस्कृति भाषा का प्रमुख स्थान है, उच्च शिक्षा में अंतरराष्ट्रीय भाषा का विदेशी भाषा की आवश्यकता पड़ती है। शिक्षा की व्यवस्था में भाषाओं को स्वभाविक स्थान है। परन्तु भारत में भाषा शिक्षा एक समस्या बनी हुई है।

इन्ही समस्याओं के बारे में विभिन्न समितियों, आयोगों तथा परिषदों ने संस्तुतियाँ दी है।

1.2.3.1. ताराचन्द समिति – (1948)

माध्यमिक शिक्षा में सुधार हेतु इस समिति की नियुक्ति की गई। डॉ. ताराचन्द की अध्यक्षता 1948 में समिति का गठन हुआ। इसकी संस्तुतियाँ इस प्रकार था –

1. कक्षा 6 से 8 तक मातृभाषा के अतिरिक्त अंग्रेजी का कुछ समय तक अनिवार्य रखना जाए।

2. माध्यमिक स्तर में मातृभाषा के अतिरिक्त अंग्रेजी को कुछ समय तक अनिवार्य रखा जाए। परन्तु अंग्रेजी हर जाने पर संघीय भाषा को अनिवार्य करा जाए।

1.2.3.2. मुदलियार शिक्षा आयोग – (1952-53)

1. शिक्षा का माध्यम मातृभाषा या क्षेत्रिय भाषा हो
2. पूर्व माध्यमिक स्तर पर दो भाषाएँ शिक्षा दी जाएँ। उसमें अंगेजी भाषा रहे।
3. उच्च माध्यमिक स्तर में दो भाषाओं की शिक्षा दी जाएँ। प्रथम भाषा- मातृभाषा / क्षेत्रीय भाषा द्वितीय भाषा – हिन्दी / अंग्रेजी / अन्य भारतीय भाषा संस्कृत भाषा।

1.2.3.3. कोठारी आयोग – (1964-66)

कोठारी आयोग ने द्विभाषी सूत्र का संशोधन किया। इस आयोग ने तीन भाषाओं के अध्ययन को अनिवार्य करने की संस्तुति की।

1. प्रथम भाषा – मातृभाषा / क्षेत्रीय भाषा
2. द्वितीय भाषा – केन्द्र की राजभाषा / सह राजभाषा
3. तृतीय भाषा – भारतीय भाषा/विदेशी (जो शिक्षा का माध्यम न हो या प्रथम द्वितीय से भिन्न हो।)

1.2.3.4. सुनीति कुमार चटर्जी आयोग – 1956 - 57

प्रथम भाषा – मातृभाषा

द्वितीय भाषा – अंग्रेजी

तृतीय भाषा – संस्कृत/ हिन्दी (माध्यम भिन्न भाषा)

केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार माडल (1956) त्रिभाषी सूत्र के रूप में भाषा शिक्षा समस्या को समाधान किया 1 सन् 1957 में इस सूत्र को स्वीकृति दी आार सन् 1961 में मुख्मन्त्रियों के सम्मेलन में त्रिभाषा सूत्र की पुष्टि भी कर दी इस सूत्र के अनुसार प्रत्येक भारतीय बालक को तीन भाषाओं का अध्ययन करना अनिवार्य हो-

प्रथम – मातृभाषा / क्षेत्रीय भाषा

द्वितीय – अंग्रेजी भाषा / संस्कृत भाषा

तृतीय – हिन्दी (अंग्रेजी प्रदेशियों के लिए / अन्य भारतीय भाषा

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. भाषा के वैयक्तिक भिन्नता और जीवन समन्वय सिद्धान्तों बताइए ?
2. भाषा के अभ्यास का सिद्धान्त और स्वाविकता का सिद्धान्त सिद्धान्तों बताइए?

1.2.4. पाठयक्रम में संस्कृत भाषा का स्थान

पाठयक्रम में संस्कृत के स्थान के बारे में कई भिन्न मत मिल आ रहै ये। मेकाले शिक्षण पद्धति से प्रभावीत होकर संस्कृत से दूर जा रहा भारतीय जनमानस अत: संस्कृत का पाठय क्रम में स्थान निर्धारण में कई तक हो रहे है। उन तकों को तीन दृष्टिकोण से बानते हुए उपस्थापन कर रहे है।

1.2.4.1. प्रथम दृष्टिकोण –

कुछ विद्वान संस्कृत को मृतभाषा कहते हुए, संस्कृत को कोई बहुत ज्यादा महत्व देने को आवश्यकता नहीं समझते है। उससे छात्रों को समय का अपत्यय होगा लेकिन यह विचार सम्पूर्ण अज्ञान पूर्ण है।

1.2.4.2. द्वितीय दृष्टिकोण –

इस दृष्टिकोण में संस्कृत की आवश्यकता को महत्व कर रहे है। लेकिन संस्कृत के आपसे आधुनिक विषयों को अधिक महत्व दे रहे है। अत: संस्कृत को वैकल्पिक स्थान देने के लिए तैयार है। जिनको इच्छा होती है। लोगों के लिए केवल हो, अर्थात् अनिवार्य विषय का स्थान न मिले।

1.2.4.3. तृतीय दृष्टिकोण

इस दृष्टिकोण का पृष्ठ-पोषण करने वाले विद्धान संस्कृत को पाठयक्रम में अनिवार्य स्थान देना चाहते है। इस दृष्टिकोण के विद्धान संस्कृत केा केवल प्राचीन भाषा नहीं अपितु आधुनिक भाषा के रूप में प्रतिपादित कर रहे है, कि बहुना संस्कृत को आज संगणक के लिए सर्वोपयोगी भाषा मानी जा रही है।

संस्कृत-अध्यापक विषयक स्थान के बारे में विचार विर्मश करने के लिए संस्कृत आयोग का निर्माझा किया गया था। जिस का अध्यस सूनीति कुमार चटर्जी थे। 1956.57 निर्मित इस आयोग ने अपने शिसरिसों में संस्कृत का अनिवार्थ स्थान परिकल्पना किया एवं और संस्कृत का स्थान को सदृढ करने की दृष्टि से कई शिफारिस कि

1. माध्यमिक विद्यालयों में संस्कृत अनिवार्य हो
2. संस्कृत भाषा में अनुसंधान को प्रोन्साहन मिले
3. प्रशासन सेवा के प्रवेश परीक्षा में संस्कृत का स्थान है।
4. विभिन्न जनसंचार माध्यमों के द्वारा संस्कृत भाषा का प्रचार प्रसार किया जाए।
5. संस्कृत पाण्डुलिखिओं को संरक्षण किया जाए

तीन प्रकार के मतों को विचार करने से ये स्पष्ट हो रही है। कि संस्कृत भाषा का दोप्रकार स्थान हो सकता है एक अनिवार्य और मिला हुआ है। कुछ संस्कृतनिष्ठ शालाओं में संस्कृत अनिक्षा रूप में भी स्थान मिला हुआ है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. भाषा के वैयक्तिक भिन्नता और जीवन समन्वय सिद्धान्तों को बताइए ?
2. भाषा के अभ्यास का सिद्धान्त और स्वाभाविकता का सिद्धान्त स्पष्ट कीजिए?

1.2.5. भाषा शिक्षण के सामान्य सिद्धान्त

भाषा शिक्षण के सिद्धान्त बालकों की स्थितियों प्रवृत्तियों, व्यक्तिगर्ताभिन्नताओं समताओं आदि के आधार से निर्धारित होते है। भाषा शिक्षण में जिन सामान्य सिद्धान्तों का ध्यान रखा जाना आवश्यक है, वे निम्नलिखत हैं –

1.2.5.1.अभ्यास का सिद्धान्त

जिस कार्य का अध्यास जितना प्रभावी होता है, वह उतना स्थिर होता है। अत: भाषा जैसा कलात्मक पक्ष के लिए अभयास सर्वथा आवश्यक है। अध्यास से भाषा तीव्रतर गति से सुदृश होती है।

1.2.5.2. स्वाभाविकता का सिद्धान्त

भाषा प्रवाह है। परिवेश से भाषा स्वाभाविक रूप से आ जाती है। जैसे बालक मातृभाषा को स्वाभाविक रूप से सीखता है। अन्य भाषा परिवेश में में भी व्यक्ति उस भाषा को स्वाभाविक रूप से लिख लेता है।

1.2.5.3. प्रभाव का सिद्धान्त

यह सिद्धान्त हर शिक्षण क्षेत्र में होता है। जैसे व्यक्ति किसी भाषा में टुटे-फुटे शब्दों में अपनी अभिव्यक्ति प्रकट करता है एवं उसे प्रतिक्रिया प्राप्त होती है, तब उस प्रतिक्रिया से प्रभावीत हो कर व्यक्ति उस भाषा को बोलता है और भाषा सीख जाता है।

1.2.5.4. रुचि का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त में रुचि का महत्वपूर्ण स्थान है। भाषा के प्रति रुचि, भाषा सम्बन्धित संस्कृति, परम्परा, साहित्य के प्रति रुचि भाषा सीखने के लिए अभिप्रेरित करती है। जैसे कई व्यक्ति मातृभाषा भिन्न होने पर भी कई अन्य भाषाएँ सिख लेते है।

1.2.5.5. अभिप्रेरणा का सिद्धान्त

भाषा शिक्षण में कई तत्व अभिप्रेरणा प्रदान करने का कार्य करते है। जैसे वस्तु, मॉडल आदि के द्वारा बच्चों में जिज्ञासा उत्पन्न किए जाते हैं, जिज्ञासा रूपक अभिप्रेरणा से बच्चे सम्बन्धित भाषा को सीख जाता है। बालक अन्ताक्षरी, वादविवाद, भाषण आदि प्रतियोगीता से भाषा शिक्षण में प्रेरित होता है।

1.2.5.6. क्रियाशीलता का सिद्धान्त

यह सिद्धज्ञन्त भाषा प्रयोग को सुदृढ बनाता है। भाषा का लिखित मौखिक कार्यों का अभ्यास से भाषा स्वाभाविक, सहज एवं शीघ्रग्राह्य भी हो जाती है। अत: भाषा शिक्षण में साहित्यिक कार्यक्रमों का आयोजन महत्वपूर्ण होता है।

1.2.5.7. जीवन समन्वय का सिद्धान्त

लेखन, पठन के अलावा भाषा का वास्तविक जीवन से सम्बन्ध घनिष्ठ है। अत: लेखन पठन की भाषा के अलावा व्यक्ति और कई भाषाएँ सीख लेता है, जो कर्मक्षेत्र, जीवन साधन क्षेत्रों से जीवन यापन से जुडी होची है।

1.2.5.8. वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त

व्यक्तिगत विभिन्नता भाषा शिक्षण का आधार बनता है। जैसे कई व्यक्ति कई भाषाएँ सरलता से सीख लेते है। शुद्ध उच्चारण, स्पष्ट लेखने, सटीक वाचन भी आदि क्रियायों में वैयक्तिक भिन्नताएँ पाई जाती है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. भाषा के वैयक्तिक भिन्नता और जीवन समन्वय सिद्धान्त को बताइए ?
2. भाषा के अभ्यास का सिद्धान्त और स्वाविकता का सिद्धान्त सिद्धान्त को बताइए?

1.3. सारांश

संस्कृत भाषा विश्व का प्राचीनतम भाषा है। संस्कृत भाषा साहित्य विज्ञानों का भण्डार। भाषा विज्ञान के क्षेत्र में संस्कृत सर्वश्रेष्ठ है। संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति का बाहक है अतः कहा जाता है "संस्कृतं संस्कृतिस्तथा।" संस्कृत ग्रन्थों में विश्व का सर्वश्रेष्ठ जीवन मूल्य विद्यमान है। तथा जीवन के प्रत्येक परिस्थिति के लिए संस्कृत रचित ग्रन्थ मार्गदर्शक बनता है। अतः संस्कृत का महत्व वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, व्याहारिक आदि दृष्टि से अशेष है। संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यो को सामान्य तथा विशिष्ट रूपों से दो भागो मे वाण्टा जा सकता है। आयु तथा कक्षा स्तर को ध्यान में रखते हुए भी संस्कृत भाषा के शिक्षण उद्देशयों को प्राथमिक, माध्यमिक एवं

उच्च स्तरों के आधार से विभाजन कर सकते है। संस्कृत भाणा मं विद्यालय, पाठ्यक्रम का स्थान के बारे मं तीन दृष्टिकोष सामने आते है यथा प्रथम दृष्टिकोण – संस्कृत के लिए कोई स्थान नही, द्वितीय दृष्टिकोण – संस्कृत को वैकल्पिक स्थान प्राप्त हो, तृतीय दृष्टिकोण – संस्कृत को निवार्य स्थान प्राप्त हो, संस्कृत आयोग ने भी संस्कृत की अनिवार्यता को अंगीकार किया है। परन्तु अन्य समितीओं वैकल्पिक स्थान के लिए सिफारिसें की है। अभ्यास, स्वाभाविकता, प्रभाव, रूचि, क्रियाशीलता एवं वैयक्तिक विभिन्नता आदि भाणा शिक्षण सिद्धान्त संस्कृत भाषा शिक्षण में भी उपयोगी है।

1.4. अपनी प्रगती की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

अपनी प्रगति की जाँच –

उत्तर- अध्याय 1.2 देखे |

1.5. शब्दावली

शिक्षण सिद्धांत –भाषा शिक्षण में बालक की रूचियों, प्रवृतियों, व्यक्तिगत भिन्नताओं, क्षमताओं अदि को ध्यान में रखते हुए शिक्षण सिद्धांत निर्धारित किये जाते है।

दूसरी भाषा – शिक्षा व्यवस्था में मतृ भाषा को प्रथम स्थान दिया गयागाया एवं मातृ भाषा भिन्न अन्य भाषा को दूसरी भाषा के रूप में संबोधन किया गया है। परन्तु भारतीय संस्कती का बाहक संस्कृत होने के कारण से संस्कृत को सांस्कृतिक भाषा की दर्जा मिती है।

दृष्टिकोण–विचार, अभिमत अथवा निर्णय अनुकुल युक्ति का अनुसंधान।

1.6. कार्य आवंटन

1. संस्कृत भाषा शिक्षण का विभिन्न महत्व को स्पष्ट कीजिए।
2. संस्कृत भाषा शिक्षण के स्तरानुगुण उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।

1.7. क्रियाएं

1. विभिन्न आयागों के सिफारिसों को स्पष्ट करें।
2. संस्कृत भाषा शिक्षण के विभिन्न सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।

1.8. प्रकरण अध्ययन (केस स्टडी)

1. संस्कृत भाषा शिक्षण के विभिन्न उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
2. अन्य भारतीय भाषाओं के ऊपर संस्कृत का प्रभाव स्पष्ट कीजिए।

1.9. संदर्भ पुस्तके

01. सक्सेना, राधारानी, (2013),"नवाचारी शिक्षण पद्धतियाँ", जयपुर, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी गुप्त, मनोरमा – भाषा अधिगम, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा
02. गुनानंद- हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास, विनोद पुस्तक मंदिर , आगरा द्विवेदी, देवीशंकर – भाषा और भाषिकी, भाषा-विज्ञान-विभाग,सागर वि.वि , सागर
03. पांडेय, रामाशकल –हिन्दी शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा
04. चतुर्वेदी, शिखा – हिन्दी शिक्षण, आर.लाल बुक डिपो, मेरठशर्मा, देवेन्द्रनाथ – भाषा विज्ञानं की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
05. तिवारी, भोलानाथ, भाषा विज्ञान, चौखम्बा प्रकाशन, वारणासी
06. शर्मा, लक्ष्मनाराय़ण, सिंह फतेह, संस्कृतशिक्षणं नविन प्रविधयः,आदित्य प्रकाशन,जयपुर
07. मित्तल,संतोष,संस्कृतशिक्षणम, नवचेतना पब्लिकेशनस्, जयपुर
08. सफाया, रघुनाथ,संस्कृत शिक्षण, हरयाणा ग्रन्थ अकादमी .
09. पाण्डेय, रामशकल, संस्कृत शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
10. विश्वासः,कौशलबोधिनि, संस्कृत भारती, दिल्ली
11. शर्मा, मुरलीधर, संस्कृत शिक्षण समस्या, रा.सं.सं विद्यापीठ, तिरूपति
12. सिंह, कर्ण, संस्कृत शिक्षण विधि,एच्. पि.भार्गव बुक सेंटर, आगरा

इकाई – 2
संस्कृत शिक्षण पद्धतियाँ

इकाई की रूपरेखा

2.0. इकाई परिचय
2.1. शिक्षण के उद्देश्य
2.2. विषय विवेचन
2.2.1. संस्कृत शिक्षण पद्धतियाँ
2.2.1.1. परम्परा पद्धति
2.2.1.2. भण्डारकर पद्धति
2.2.1.3. प्रत्यक्ष पद्धति
2.2.1.4. पाठ्यपुस्तक पद्धति
2.2.1.5. आगमन-निगमन पद्धति
2.2.1.6. समाहार पद्धति
2.2.2. हरबार्टीय पञ्चपदी
2.2.3. संस्कृत भाषा शिक्षण के शिक्षण सूत्र
2.3. सारांश
2.4. अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर
2.5. शब्दावली
2.6. कार्य आवंटन
2.7. क्रियाएँ
2.8. प्रकरण अध्ययन(केस स्टडी)
2.9. संदर्भ पुस्तकें

2.0. इकाई परिचय

प्रत्येक भाषा अपने आप में एक विशेषता है। जैसे संस्कृत भाषा की अपनी विशेषता है कि शिक्षण में संस्कृत भाषा की मौलिकता, सरलता, सरसता, सहजता एवं समुचित बोधगम्यता को बरक़रार रखने के लिए विशिष्ट पद्धतियाँ उदिष्ट होती है। अत: इस अध्याय में संस्कृत भाषा की पद्धतियों को स्पष्ट किया गया है। संस्कृत भाषा यथार्थ अति प्राचीन है तथा संस्कृत भाषा की महत्वपूर्णता सर्वकालिक है। इसलिए हरबार्ट पंचपदी एवं शिक्षण सूत्र पद्धति की भी चर्चा इस अध्याय में की गई है।

2.1. शिक्षण के उद्देश्य

इस इकाई के पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित में सक्षम होंगे :

1. संस्कृत भाषा शिक्षण के विभिन्न पद्धतियों का ज्ञान प्राप्त करना।
2. संस्कृत भाषा शिक्षण की आधुनिक पद्धतियों का ज्ञान प्राप्त करना।
3. भाषा शिक्षण सूत्रों का ज्ञान प्राप्त करना।
4. संस्कृत भाषा शिक्षण में पद्धतियों की विशेषता का ज्ञान प्राप्त करना।
5. संस्कृत भाषा शिक्षण तथा अन्य भाषा शिक्षण में भेद का ज्ञान प्राप्त करना।

2.2. विषय विवेचन

2.2.1. संस्कृत शिक्षण पद्धतियाँ

संस्कृत शिक्षण की निम्नलिखित पद्धतियाँ हैं –

2.2.1.1. परम्परा पद्धति
2.2.1.2. भण्डारकर पद्धति
2.2.1.3. प्रत्यक्ष पद्धति
2.2.1.4. पाठ्यपुस्तक पद्धति
2.2.1.5. आगमन-निगमन पद्धति
2.2.1.6. समाहार पद्धति

2.2.1.1. परम्परागत पद्धति

प्राचीन काल से इस देश में संस्कृत का अध्ययन-अध्यापन नित्य नैमित्तिक परम्परा से चली आ रही है। प्राचीन काल में शिष्य–गुरु के आश्रम में जाकर के गुरु के सानिध्य में रह कर विद्याभ्यास करता था। जिसके लिए छात्र को यज्ञविधि से यज्ञोपवित धारण कराया जाता था। यज्ञोपवित धारण के पच्चात गायत्री मन्त्र उपदेश के साथ अध्ययन आरम्भ होता था एवं बारह वर्ष पर्यन्त चलता था।

वैशिष्टय

1. छात्र का जीवन श्रृंखलामय होता है।
2. प्रात:काल हवन से कार्यारंभ होता था और अध्ययन, क्रीड़ा, गृहविधि, प्रार्थना आदि से दिन व्यतीत होता था।
3. अध्ययन का माध्यम भाषा संस्कृत ही होता है।
4. संस्कृत-ग्रंथों का अध्ययापन किये जाते है।

5. गुरु-शिष्य सम्बन्ध पिता पुत्र का होता है।
6. गुरु प्रत्येक छात्र के ऊपर वैयक्तिक ध्यान देता है।
7. वेद-वेदांग-उपनिषद, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, धनुर्वेद आदि के विषयों का अध्ययन कराया जाता था।
8. इस पद्धति ने प्रतिभा सम्पन्न विद्वानों का निर्माण किया है।
9. स्मरण शक्ति की प्रवीणता आ जाती है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. परम्परागत पद्धति का स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
2. परम्परागत पद्धति का वैशिष्टय स्पष्ट कीजिए।

2.2.1.2. भण्डारकर पद्धति

डॉ.गोपाल कृष्ण भण्डारकर संस्कृत अध्ययन क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन करके नूतन अध्ययन पद्धति का विकास किया। भाषाशास्त्र के मापन एवं मूल्यांकन शिक्षण पद्धति के आधार पर नूतन शिक्षण पद्धति का अविष्कार किया। उस नूतन शिक्षण पद्धति का नाम भण्डाकर पद्धति रखा गया। संस्कृत शिक्षण के लिए उन्होंने एक पुस्तक की रचना की इस पुस्तक को दो भागों में विभाजित किया गया है। प्रथम भाग का नाम-संस्कृत मन्दिरान्त–प्रवेशिका तथा द्वितीय भाग का नाम- संस्कृत-मार्गोपदेशिका है। इन दो भागों में व्याकरण एवं अनुवाद पद्धतिओं का प्रमुख रूप में प्रयोग किया गया। अत: भण्डाकर पद्धति का नाम व्याकरण-अनुवाद पद्धति भी रखा गया। प्रथम भाग में 31 पाठ तथा द्वितीय भाग में 26 पाठ थे।

वैशिष्टय

1. इस पद्धति में संस्कृत भाषा का सरल स्वरूप स्पष्ट किया गया है।
2. इस विधि में संस्कृत के नियमों को बोधगम्य में बनाया जाता है।
3. सरल पद्धति का त्याग करके अनुबोध पद्धति का आधार लिया जाता है।
4. व्याकरण एवं अनुवाद के आधार से संस्कृत सिखाया जाता है।
5. व्याकरण नियमों का वर्गीकरण किया गया है।
6. इस विधि द्वारा एक साथ बड़े समूहों को सरलता से पढाया जा सकता है। अत: इससे समय, शक्ति और धन की बचत होती है।
7. ''सरल से कठिन'' शिक्षण सूत्र का प्रयोग किया गया है।
8. पद्धति मनोवैज्ञानिक पद्धति है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. भण्डारकर पद्धति का संप्रत्यय स्पष्ट करें।
2. भण्डारकर पद्धति की प्रक्रिया स्पष्ट करें।

2.2.1.3. प्रत्यक्ष पद्धति

प्रत्यक्ष पद्धति में किसी भी अन्य भाषा की सहायता के बिना संस्कृत भाषा का शिक्षण होता है। अर्थात् किसी भाषा को उसी भाषा में सिखाने की प्रक्रिया को प्रत्यक्ष पद्धति कहते है। संस्कृत को सिखाने के लिए संस्कृत भाषा में ही विचार करने के लिए योग्य वातावरण निर्माण किया जाता है। संस्कृत के विशिष्ट शब्दों का अर्थ समझाने के लिए वस्तुओं को प्रदर्शन हाव-भाव युक्त अभिनय, पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग एवं व्याख्या आदि के द्वारा प्रयत्न किए जाते है।

वैशिष्टय

1. अध्यापक केवल संस्कृत भाषा का प्रयोग करता है।
2. छात्र एवं अध्यापक के मध्य सम्बन्ध, पारस्परिक भाषिक व्यवहार संस्कृत भाषा में ही होता है।
3. ऐसे वातावरण में लेखन, पठन के साथ-साथ भाषा को समझने की एवं बोलने की सहज प्रवृत्ति निर्माण होता है।
4. इसमें अन्य भाषा की सहायता नहीं ली जाती है।
5. इस प्रणाली से अध्यापन रोचक बनता है।
6. इस प्रणाली से अर्थों में सहज सम्ब्ना स्थापित किया जाता है।
7. यह मनोवैज्ञानिक पद्धति है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. प्रत्यक्ष पद्धति का अर्थ स्पष्ट करें।
2. प्रत्यक्ष पद्धति का महत्व स्पष्ट करें।

2.2.1.4. पाठ्यपुस्तक पद्धति

पाठ्य पुस्तक विधि आज कल बहुत प्रसिद्ध है। इस पद्धति से भाषा सिखाने के लिए प्रथमत: उद्देश्य तय किए जाते है। उद्देश्य के अनुसार भाषा के विभिन्न विधाओं के अनुसार विषयानुरूप गद्य-पद्य, व्याकरण आदि को सम्मलित करके पाठ्यपुस्तक का निर्माण किया जाता है। इस पद्धति से संस्कृत भाषा सुदृढ़ हो जाती है।

वैशिष्टय

1. संस्कृत भाषा शिक्षण सुलभ एवं सरल हो जाता है।
2. व्याकरण के ऊपर अधिक भार नहीं दिया जाता है।

3. वाचन के द्वारा मनोविज्ञान का उद्देश्य भी पूर्ण होता है एवं पठन के लिए प्रेरणा मिलती है।
4. नूतन कौशलों के विकास के लिए अभ्यास की व्यवस्था की जाती हैं।
5. व्याकरणों के तत्वों को पाठों में प्रयोग स्वरूप रखे जाते हैं।
6. छात्रों के स्तर एवं समय को ध्यान में रख के पाठयाशों का चयन किया जाता है।
7. छात्र स्वयं का मुल्यांकन करने में समर्थ होता है।
8. इस पद्धति से छात्रों में उच्चारण, वाचन, व्याकरण, अनुवाद आदि कौशलों में सुलभता आती है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. पाठ्य पुस्तक पद्धति का स्वरूप स्पष्ट करें।
2. पाठ्य पुस्तक पद्धति का वैशिष्टय स्पष्ट करें।

2.2.1.5. आगमन-निगमन पद्धति

व्याकरण शिक्षण की प्रमुख पद्धति आगमन-निगमन पद्धति है। ये पद्धतियाँ पद्धतियाँ परस्पर एक दूसरे के विपरीत होती है।

आगमन पद्धति – इस पद्धति में उदाहरण से नियम की ओर पढाया जाता है। यह पद्धति निगमन पद्धति का विपरीत पद्धति है उदाहरणों का विश्लेषण करके समान धर्म का अन्वेषण किया जाता है। सामान्यीकरण से नियम का निर्धारण किया जाता है। इस विधि में विभिन्न सोपानों से अध्यापन किये जाते है। वे सोपान है (1) उदाहरण प्रस्तुतीकरण (2) उदाहरण विश्लेषण (3) सामान्यीकरण (4) नियम-निर्धारण। इस पद्धति में ‘‘सामान्य से विशिष्ट की ओर’’ सूत्र का भी प्रयोग होता है।

निगमन पद्धति- आगमन पद्धति का सम्पूर्ण विपरीत पद्धति है। इस पद्धति में “नियम से उदाहरण की ओर” सूत्र से पढाया जाता है। इस पद्धति में सूत्र का प्रस्तुतीकरण होता है, सूत्रस्थ सूत्र वृत्रि के द्वारा सूत्र का सरल अर्थ प्रतिपादित किये जाते हैं। अर्थ प्रति-पादन के पच्चात उदाहरण का उपस्थापन किया जाता है। उदाहरणों के माध्यम से नियम का प्रायोगिक मूल्यांकन किया जाता है।

वैशिष्टय –

1. छात्रों के प्रत्येक स्तर के लिए योग्य पद्धति है।
2. व्याकरण सिखाने के लिए सर्वोत्कृष्ट पद्धति है।
3. छात्रों के लिए व्याकरण सरल लगता है।
4. मनोवैज्ञानिक पद्धति है।
5. छात्रों के मानसिक क्षमता के आधार पर आगमन पद्धति बहुत उपयोगी है।

6. माध्यमिक स्तर के लिए आगमन पद्धति एवं उच्च स्तर के लिए निगमन पद्धति का प्रयोग होता है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. आगमन-निगमन पद्धति की प्रक्रिया स्पष्ट करें।
2. आगमन निगमन पद्धतियों की तुलना कीजिए।

2.2.1.6. समाहार पद्धति

संस्कृत शिक्षण के बारे में चर्चा करने के पश्चात् पता चलता है कि कोई भी विधि अपने आप में पूर्ण नहीं होती। प्रत्येक विधि में कुछ न कुछ दोष अवश्य होते है। यदि शिक्षण को मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विचार किया जाय तो छात्रों की आकलन क्षमता, अभिरुचि, अभिवृत्ति आदि के बारे में ध्यान केन्द्रित कराना अनिवार्य है एवं साथ-साथ संस्कृत शिक्षण से सम्बन्धित पद्धतियों से दोषास्पद बिन्दुओं को निकाल कर गुणात्मक बिन्दुओं को जोड़कर नई शिक्षण पद्धति का विकास होता है। जिसको समाहार विधि कहा जाता है। जो संस्कृत शिक्षण में सबसे प्रभावी होता है।

वैशिष्टय

1. शब्द शक्ति की दृढ़ता के लिए पाठ्यपुस्तक का उपयोग किया जाता है।
2. आगमन-निगमन दोनों विधियों की आवश्यकता को देख कर प्रयोग करते है।
3. दृश्य-श्रव्य उपकरणों का स्पष्ट उपयोग किया जाता है।
4. संस्कृत शिक्षण में आधुनिक तत्वों का प्रयोग होता है।
5. संस्कृत शिक्षण के लिए विशेष शिक्षण सामग्री का निर्माण किया जाता है।
6. संस्कृतमय वातावरण का निर्माण किया जाता है।
7. गद्य पद्धतियों में पाठ्यानुसार अनुवाद का प्रयोग किया जाता है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. समाहार पद्धति का स्वरूप स्पष्ट करें।
2. समाहार पद्धति का महत्व स्पष्ट करें।

2.2.2. हरबार्टीय पञ्चपदी

प्रसिद्ध दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक हरबार्ट के सिद्धान्तों के आधार पर उसके शिष्यों ने हरबार्टीय पंचपदी का विकास किया है। इन पाँचों पदों द्वारा पाठ के शिक्षण का विधान किया गया है। ये पाँचों पद निम्नलिखित हैं-

1. प्रस्तावना,

2. विषयोपस्थापन,
3. तुलना,
4. सामान्यीकरण
5. प्रयोग

1. प्रस्तावना- प्रस्तावना में दो-एक प्रश्नों द्वारा कवि या लेखक के विषय में वार्तालाप द्वारा प्रस्तुत पाठ के लिए छात्रों को तैयार किया जाता है। वर्तमान पाठ के लिए तैयारी बड़ी महत्वपूर्ण है। यदि प्रस्तावना ठीक नहीं हुई तो पाठ की सफलता भी कठिनता से मिलेगी। प्रस्तावना पिछले पाठ की पुनरावृत्ति द्वारा भी हो सकती है। प्रसंग का वर्णन करके भी प्रस्तावना की जा सकती है। आजकल कुछ प्रश्नों द्वारा प्रस्तावना अच्छी समझी जाती है।

2. विषयोपस्थापन- मुख्य भाव के अनुसार पाठ को दो-तीन अन्वितियों में बाँट लिया जाता है। प्रत्येक अन्विति को प्रस्तावना के पश्चात् छात्रों द्वारा अनुकरण वाचन, सन्धि-समास, समास विग्रह, दण्डन्वय, खण्डान्वय एवं भाव परीक्षा के प्रश्न आते हैं।

3. तुलना –तुलना में वर्तमान पाठ की तुलना बालकों के संचित ज्ञान से की जाती है। भाषा-शिक्षण में काठिन्य-निवारण, विस्तृत व्याख्या इसी पद के अन्तर्गत है। इन सबकी चर्चा आगे के अध्यायों में की जायेगी।

4. सामान्यीकरण- व्याकरण के पाठों में इसका विशेष उपयोग है। संचित ज्ञान की प्रस्तुत पाठ से तुलना करने पर छात्र स्वयं कुछ सामान्य सिद्धान्तों का दर्शन करते हैं। इन सामान्य सिद्धान्तों का निर्माण इस पद में किया जाता है। भाषा-शिक्षण में इस स्तर पर पुनरावृत्ति के प्रश्न आते हैं। कविता-शिक्षण में समान भाव की कविताएँ दी जा सकती हैं।

5. प्रयोग –प्रस्तुत पाठ की उपस्थापना एवं तुलना के बाद छात्र जब सामान्य सिद्धान्त का निर्धारण कर लेते हैं, तब बाद में यह भी आवश्यक हो जाता है कि छात्र नवार्जित ज्ञान को व्यवहृत या प्रस्तुत करें। यह प्रयोग की अवस्था है। इस पद में भाषा के पाठों में छात्रों को कुछ अभ्यास –कार्य दिया जाता है। कथा-कार्य एवं गृह-कार्य भी प्रयोग के लिए ही दिये जाते हैं।

हरबार्टीय पंचपदी मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है। इनमें वही क्रम अपनाया गया है जो विचारों के ज्ञान में अपनाया जाता है। पद्धति की आलोचना भी की जाती है। आलोचना की मुख्य बात यह है कि यह पद्धति सभी प्रकार के विषयों में प्रयुक्त नहीं हो सकती है। विज्ञान को पढ़ाने में यह असफल ही सिद्ध हुई है। भाषा-शिक्षण में भी सभी प्रकार के पाठों में इसका प्रयोग नहीं हो पाता। फिर भी यह पद्धति आवश्यक संशोधन के साथ आज भी काम में लायी जा सकती है।

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. हरबार्टीय पंचपदी में सामान्यीकरण का अर्थ स्पष्ट करें।
2. हरबार्टीय पंचपदी का महत्व स्पष्ट करें।

2.2.3. संस्कृत भाषा शिक्षण के शिक्षण सूत्र

इस सिद्धान्त में शिक्षण सूत्र हैं। शिक्षण-सूत्रों पर प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री हरबर्ट स्पेन्सर ने भी बल दिया था। संस्कृत-शिक्षण में निम्नलिखित सूत्र विशेष उपयोगी हैं-

01. ज्ञानेन्द्रियों द्वारा शिक्षण
02. विश्लेषण से संश्लेषण की ओर
03. पूर्ण से अंश की ओर
04. अनिश्चित से निश्चित की ओर
05. सरल से कठिन की ओर
06. ज्ञात से अज्ञात की ओर
07. मनोवैज्ञानिक से तर्कपरक की ओर
08. स्थूल से सूक्ष्म की ओर
09. विशेष से सामान्य की ओर
10. आगमन से निगमन की ओर
11. प्रकृति की अनुसरण

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. शिक्षण सूत्रों के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए।
2. संस्कृत शिक्षण में प्रयुक्त शिक्षण सूत्रों को लिखिए।

2.3. सारांश

भाषा परम्परा से प्राप्त पैतृक संपत्ति नहीं है। व्यक्ति आयु वृद्धि के साथ अनुकरण द्वारा अर्जित करता है। भाषा को सिखाने के लिए विधियाँ तथा प्रविधियाँ होती है प्रत्येक भाषा शिक्षण में अपने-अपने स्वरूप एवं प्रकृति के अनुसार विधियाँ निश्चित होती है। संस्कृत भाषा शिक्षण की भी कुछ प्रचलित विधियाँ है। जैसे- व्याकरण-अनुवाद विधि, प्रत्यक्ष विधि, ढांचागत विधि, संप्रेषणात्मक विधि, व्याख्यान विधि आदि। इसमें कुछ प्रणाली

प्राचीन है और कुछ नवीन। हरबार्टीय पंचपदी में प्राचीन और नवीन पद्धति का समन्वय पाया जाता है। शिक्षण सूत्र पद्धति भी उभय अर्थात प्राचीन और नवीन पक्ष का समर्थक है।

2.4. अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

अपनी प्रगति की जाँच –
उत्तर- अध्याय 2.2 देखे |

2.5. शब्दावली

शिक्षण विधि – "आव्यूहनियोजन तथा निर्देशन की वह कला अथवा विज्ञान है जिससे वृहत् सेनाओं के कार्य एवं गति संचालित होती है।" – **शब्दकोष**

व्याख्यान विधि –बड़ी कक्षाओं में प्रयोग की जाने वाले पद्धति व्याख्यान एक व्यावहारिक विधि है।"

–उबाईनिंग एवं बाईनिंग

प्रत्यक्ष पद्धति –"इंद्रियजन्यज्ञानं प्रत्यक्षं"। अर्थात् इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त ज्ञान की प्रक्रिया।

2.6. कार्य आवंटन

1. प्रत्यक्ष पद्धति का स्वरूप स्पष्ट कीजिए।
2. हरबार्टीय पंचपदी के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।

2.7. क्रियाएं

01. भाषा शिक्षण की पद्धतियों की उपयोगिता का वर्णन कीजिए।

02. हरबार्टीय पंचपदी शिक्षण पद्धति के सोपानों को स्पष्ट कीजिए।

2.8. प्रकरण अध्ययन (केस स्टडी)

1. पारम्परिक तथा आधुनिक शिक्षण पद्धतियों की तुलना कीजिए।
2. संस्कृत भाषा शिक्षण पद्धतियों के गुण एवं दोषों को स्पष्ट कीजिए।

2.9. संदर्भ पुस्तकें

01. सक्सेना, राधारानी, (2013),"नवाचारी शिक्षण पद्धतियाँ", जयपुर, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी।
02. गुप्त, मनोरमा – भाषा अधिगम, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा
03. गुनानंद- हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास, विनोद पुस्तक मंदिर , आगरा

04. द्विवेदी, देवीशंकर – भाषा और भाषिकी, भाषा-विज्ञान-विभाग, सागर वि.वि , सागर
05. पांडेय, रामाशकल –हिन्दी शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा
06. चतुर्वेदी, शिखा – हिन्दी शिक्षण, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ
07. शर्मा, देवेन्द्रनाथ – भाषा विज्ञानं की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
08. तिवारी, भोलानाथ, भाषा विज्ञान, चौखम्बा प्रकाशन, वारणासी
09. शर्मा, लक्ष्मनाराय़ण, सिंह फतेह, संस्कृतशिक्षणं नविन प्रविधयः,आदित्यप्रकाशन,जयपुर
10. मित्तल,संतोष,संस्कृतशिक्षणम, नवचेतना पब्लिकेशनस्,जयपुर
11. सफाया, रघुनाथ,संस्कृतशिक्षण, हरयाणाग्रन्थ अकादमी .
12. पाण्डेय, रामशकल, संस्कृत शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
13. विश्वासः,कौशलबोधिनि, संस्कृत भारती, दिल्ली
14. शर्मा, मुरलीधर, संस्कृत शिक्षण समस्या, रा.सं.सं विद्यापीठ, तिरूपति
15. सिंह, कर्ण, संस्कृत शिक्षण विधि,एच. पि.भार्गव बुक सेंटर, आगरा

इकाई –3

संस्कृत भाषा के विभिन्न विधाओं का शिक्षण

इकाई की रूपरेखा

3.0. इकाई परिचय

3.1. शिक्षण के उद्देश्य

3.2. विषय विवेचन

3.2.1. गद्य का शिक्षण

3.2.1.1. गद्य का स्वरूप

3.2.1.2. गद्य शिक्षण का उद्देश्य

3.2.1.3. गद्य का शिक्षण विधियाँ

3.2.1.4. गद्य शिक्षणकी पाठ्य योजना निर्माण का सोपान

3.2.2. पद्य का शिक्षण

3.2.2.1.पद्य का स्वरूप

3.2.2.2. पद्य शिक्षण का उद्देश्य

3.2.2.3. पद्य का शिक्षण विधियाँ

3.2.2.4. पद्य शिक्षणकी पाठ्य योजना निर्माण का सोपान

3.2.3. नाटक का शिक्षण

3.2.3.1. नाटक का स्वरूप

3.2.3.2. नाटक शिक्षण का उद्देश्य

3.2.3.3. नाटक का शिक्षण विधियाँ

3.2.3.4. नाटक शिक्षण की पाठ्य योजना निर्माण का सोपान

3.2.4. रचना का शिक्षण

3.2.4.1. रचना का स्वरूप

3.2.4.2. रचना शिक्षण का उद्देश्य

3.2.4.3. रचना का शिक्षण विधियाँ

3.2.4.4. रचना शिक्षण की पाठ्य योजना निर्माण का सोपान

3.2.5. व्याकरण का शिक्षण

3.2.5.1.व्याकरण का स्वरूप

3.2.5.2. व्याकरण शिक्षण का उद्देश्य

3.2.5.3. व्याकरण का शिक्षण विधियाँ

3.2.5.4. व्याकरण शिक्षण की पाठ्य योजना निर्माण का सोपान

3.3. सारांश

3.4. अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

3.5. शब्दावली

3.6. कार्य आवंटन

3.7. क्रियाएं

3.8. प्रकरण अध्ययन (केस स्टडी)

3.9. संदर्भ पुस्तकें

3.0. इकाई परिचय

शिक्षण विधियाँ भाषा को विचारों भावों एवं इच्छाओं की अभिव्यक्ति का साधन माना जाता है। भाषा की पूर्णता के लिए लिखने पढ़ने बोलने तथा सुनने के कौशलों का विकास होना अत्यन्त आवश्यक होता है। भाषा अधिगम शिक्षण का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। अत: भाषा के उक्त घटकों को सीखने के लिए शिक्षण विधियों का भाषा के विभिन्न अंगों के साथ विश्लेषण करना आवश्यक है। किसी भी साहित्य के अन्तर्गत विविध विधाओं का समावेश देखा जा सकता है। संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं में गद्य, पद्य, नाटक, काहानी, कथा, रचना, व्याकरण आदि आतें है। उन विधाओं को सीखने के लिए विशिष्ट विधियाँ भी है। वे विधाएं एवं संम्बन्धित शिक्षण विधियों का परिचय इस इकाई मे हो पायेगा।

3.1. शिक्षण के उद्देश्य

इस इकाई के पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित में सक्षम होंगे।

1. संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधायों का ज्ञान प्राप्त करना।
2. संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियों का ज्ञान प्राप्त करना।
3. संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधायों के तंत्रों का ज्ञान प्राप्त करना।
4. संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधायों का वैशिष्ट्यों का ज्ञान प्राप्त करना।
5. संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियाँ एवं शिक्षण विधिओं की उपयोगिता का ज्ञान प्राप्त करना।
6. संस्कृत विभिन्न विधाओं की पाठ्य योजना का ज्ञान प्राप्त करना।

3.2. विषय विवेचन

3.2.1. गद्य का शिक्षण

संस्कृत भाषा में गद्य साहित्य की उत्पति प्राचीन काल से ही है। यजुर्वेद के ब्राह्मण ग्रन्थो में, उपनिपदों में गद्यसाहित्य का निदर्शन मिलता है। गद्य को ज्ञानार्जन का उत्तम साधन रूप में माना जाता है।

3.2.1.1. गद्य का स्वरूप

गद्य साहित्य का निर्माण में सृजन क्षमता की पराकाष्टा नजर आता है। अतः कहा जाता है ‘‘गद्यं कविनां निकषं वद्न्ति’’। गद्य साहित्य विचारों की यशस्वी अभिव्यक्ति ही है। जो साहित्य रचना, लय, वृत्र गणमात्रा आदि से बन्धन रहित है उनको गद्य कहा जाता है। गद्य को भिन्न-भिन्न शैलियों के अनुसार गद्य रचना में सामान्यतः निबन्ध, कथा, आत्मकथा, चरित्र, नाटक, उपन्यास, एकांकी का आदि भेद होती है। श्रेष्ठ गद्य साहित्य वाचन से मन अह्लादित होता है। शब्द भण्डार में वृद्धि के लिए गद्य साहित्य बहुत उपयोगी होता है।

3.2.1.2. गद्य शिक्षण का उद्देश्य

1. छात्रों का शब्दशक्ति का विकास होना
2. गद्यांश पठन से शुद्ध उच्चारण का विकास होना
3. संस्कृत भाषा का परिचय
4. गद्यपाठों का भाव, विचार समझ में आना।
5. साहित्य सर्जन के लिए प्रेरणा प्राप्त करना
6. कल्पना शक्ति का विकास करना
7. संस्कृत भाषा का उत्तम परिचय होना।
8. विषय एवं आशयों का ग्रहण से ज्ञान प्राप्ति करना

3.2.2.3. गद्य का शिक्षण विधियाँ

संस्कृत गद्य शिक्षण में कई विधियों का प्रयोग किया जाता है। उनमें से कुछ विधियों को यह उल्लेख कर रहे है।

1. अनुवाद पद्धति

अनुवाद पद्धति गद्यशिक्षण की प्राचीन व लोकप्रिय पद्धति है। अर्थात संस्कृत भाषा में विद्यमान गद्यांश को समझाने के लिए मातृ भाषा में अनुवाद कर के छात्रों को समझाया जाता है।

2. अर्थ कथन पद्धति

यह संस्कृत गद्य की परम्परागत पद्धति है। इस विधि में अध्यापक सर्वप्रथम गंद्याशों का क्रमिक रूप से मौखिक पठन करता है और इसके बाद गंद्यांश में आए कठिन शब्दों का अर्थ बताता है।

3. व्याख्या विधि

यह विधि अर्थ कथन विधि का ही विकसित कण है। इसमें अध्यापक मौखिक रूप से पठन करने के बाद शब्दों की और भावों की व्याख्या करता है।

4. विश्लेषण विधि

इस प्रणाली में शिक्षक शब्द एवं भावों की व्याख्या के लिए प्रश्नों आदि का सहारा लेता है। प्रत्येक वाक्य का दूसरे वाक्य से समन्वय करता है। एवं पूर्ण गद्यांश का पाठ की दृष्टि से भावात्मक, विचारात्मक रूप सें विश्लेषण करता है।

5. संयुक्त विधि

यह विधि सारी विधियों का मिश्रित रूप है। इसमें सारी विधियों का मिश्रित रूप से प्रयोग किया जाता है। विधि, नाट्य रूपांतरण विधि, तुलनात्मक विधि आदि महत्वपूर्ण है।

3.2.2.4. गद्य शिक्षण की पाठ्य योजना निर्माण का सोपान

सामान्य उद्देश्य – पाठ से संबन्धित प्राप्त करने वाले उद्देश्यों को लिखेंगे।

विशिष्ट उद्देश्य– विशिष्ट पाठ के उद्देश्यों को लिखेंगे जैसे

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले ज्ञान का उल्लेख करेंगे।
2. बोधात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले बोध का उल्लेख करेंगे।
3. समीक्षात्मक उद्देश्य – पूर्व ज्ञान से संबन्धित पाठ के ज्ञान का समीक्षा करेंगे।
4. सृजनात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले सर्जनात्मक ज्ञान का उल्लेख करेंगे।
5. अभिवृत्यामक उद्देश्य - विशिष्ट पाठ से निर्माण होने वाले रूचि, अभिवृत्ति का उल्लेख करेंगे।

सहायक सामग्री – अध्यापन में प्रयोग किए जानेवाले चित्र, अन्य कथोपयोगी सामान्य सामग्री डस्टर, चाक, रोलर श्यामपट्ट आदि का विवरण।

पूर्वज्ञान – छात्र का अनुमानिक पूर्व ज्ञान को उल्लेख करेंगे।

प्रस्तावना – पाठ से संबन्धित पूर्व ज्ञान का परीक्षण अथवा जागृत करने का प्रयत्न किया जाएगा।

पाठ्यभिसूचना – पूर्वज्ञान अनुगुण प्राप्त करने वाले ज्ञान की सूचना दी जएगी।

आदर्शवाचन – अध्यापक के द्वारा विशिष्ट पाठ का भावानुगुण शुद्ध उच्चारण के साथ वाचन किया जाएगा।

अनुकरणवाचन– छात्र के द्वारा अध्यापक का अनुरूप अध्ययन करना होगा।

उच्चारणाभ्यास – छात्र के द्वारा किए गए त्रुटियों का अभ्यास के द्वारा संशोधन किया जायेगा।

बोध प्रश्न – पाठ का वाचन से प्राप्त बोध का परीक्षण किया जाएगा।

काठिन्य निवारण – अधो लिखित सोपान से पाठ्यांश अन्तर्गत कठिन पदों का विश्लेषण करेंगे।

शब्द	अर्थ	विधि/प्रविधि	श्यामपट्ट कार्य

व्याख्यान – पाठ का सविशेष ससंदर्भ व्याख्यान करेंगे।

विचार विश्लेषणात्मक प्रश्न – पाठ से प्राप्त विचार संबन्धित प्रश्न पूछा जाएगा।

मौनवचन – 3 मिनट के लिए मौन रूप से पाठ को पढने के लिए दिया जाएगा।

मूल्यांकन प्रश्न – पूर्ण पाठ का छात्र का अवगमनात्मक ज्ञान का परीक्षण किया जाएगा।

गृहकार्य– पठित पाठ का दृढीकरण के लिए पाठ संबन्धित सर्जनात्मक कार्य दिए जाएंगे।

अपनी प्रगति की जाँच - 1

1. गद्य का स्वरूप बताइए ?
2. गद्य शिक्षण के विधियाँ स्पष्ट करें ?

3.2.2. पद्य का शिक्षण

3.2.2.1. पद्य का स्वरूप

किसी भी भाषा साहित्य की आत्मा काव्य है। काव्य के द्वारा साहित्य में सौन्दर्य का अविष्कार होता है। काव्य प्रारम्भ से ही हृदय का विषय रहा है। काव्य में कवि की नवीन सुंन्दर कल्पना दिखती है अतः कहा जाता है- ‘‘जो न देखे रवि वो देखे कवि’’

काव्य के स्वरूप काव्य के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए कई विद्वानों ने कई मत दिए। जैसे कि ‘‘रसात्मक काव्यम’’ विश्वनाथ कविराज ने कहा अर्थात रस से युक्त वाक्य ही काव्य है। पण्डितराज जगन्नाथ अपने शब्दों में ‘‘रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम् ’’ अर्थात् रमणीय अर्थो को प्रतिपादन करने वाला शब्द ही काव्य है। ‘‘तददोषो शब्दार्थो सुगुणांवनलकृती पुनः क्वापि’’ ही काव्य है अभिनव गुप्त कहते है। अर्थात् निर्दोष गुण युक्त बहुधा अलंकार युक्त शब्द काव्य है।

उपरोक्त भव्य लक्षणों से यह स्पष्ट होता है कि जिसके पढ़ने से मन को शांन्ति आनन्द रमण की प्राप्त होती है, वह काव्य है।

3.2.2.2 पद्य शिक्षण का उद्देश्य

01. छात्रों में काव्य विषयक प्रेम निर्माण करना।
02. काव्यगत सौन्दर्य भाव रस आदि का अनुभव के प्रति प्रेरणा प्राप्त करना।
03. लय, भाव, गति, अनुसार काव्य पठन करने की योग्यता का निर्माण करना।
04. काव्य का प्रमुख भाव समझकर उसके साथ एक रूप होना।
05. छात्रों में कल्पना शक्ति का विकास करना।
06. छात्रों में तर्कशक्ति का विकास करना।
07. काव्य के विभिन्न विधाओं का परिचय प्राप्त करना।
08. काव्य मे निहित का व्यार्थ, व्यग्यार्थ, लक्षणार्थ को समझने में समर्थ होना।
09. छात्रों में काव्य रचना करने की क्षमता का विकास करना।
10. नैतिक मूल्यों का विकास करना।

3.2.2.3. पद्य का शिक्षण विधियाँ

1. गीत तथा अभिनय प्रणाली

इस प्रणाली में गीत पद्य का सस्वर वाचन के साथ-साथ अभिनय का भी प्रयोग किया जाता है। अभिनय प्रधान पदों मे अंग संचालन का शिक्षण दिया जाता है। इस विधि से छात्रों ने काव्य के प्रति रुचि उत्पन्न होती है। कवितायें शीघ्र कंष्ठस्थ हो जाती है। इस विधि में ‘‘करके सिखना’’ नियम का प्रयोग किया जाता है।

2. अर्थबोध प्रणाली

इस प्रणाली में शिक्षक स्वयं कविता का वाचन करता है। एक-एक पंक्ति के वाचन के साथ-साथ अर्थ भी स्पष्ट करता है परन्तु इस विधि से छात्र की रुचि का ध्यान नहीं रखा जाता है। यह विधि अध्यापक केन्द्रित होती है।

3. व्याख्या प्रणाली

इस विधि में अध्यापक पदय के एक एक पंक्ति को लेकर अर्थ बताते हुए कवि का मत प्रवृत्ति, रचना शैली, कविता की भाषा, रस, अलंकार, भाव आदि का स्पष्टीकरण करता हैं। साथ-साथ कविता में विद्यमान अन्तर कथा को भी स्पष्ट करता है।

4. खण्डानवय प्रणाली

इस प्रणाली को प्रश्नोत्तर तथा विश्लेषण प्रणाली भी कहते है जिस पद्य में विशेषताओं की अधिकता हो भावों की भरमार हो एवं एक-एक शब्द का अर्थ स्पष्ट किए बिना कविता का अर्थ स्पष्ट नहीं होता है। वहाँ इस प्रणाली की आवश्यकता पड़ती है। अध्यापक इस प्रणाली में प्रश्नोत्तर क्रिया का करते हुए पद्य का विश्लेषण करता है।

5. व्यास प्रणाली

इस प्रणाली में पद्य को पद्यों के भाषा और भाव दोनों की दृष्टि से विश्लेषण किया जाता है। भावों का स्पष्टीकरण के लिए अध्यापक अनेक उदाहरणों, दृष्टान्तों तथा सुक्तियों का प्रयोग करता है। भाषा की दृष्टि से एक-एक शब्द की उपादेयता एवं वाक्य विन्यास का स्पष्टीकरण करता है। अतः इस विधि में पढाने वाले का ज्ञान गहन होना आवश्यक है। इस विधि को टिका विधि कही जाती है।

3.2.2.4. पद्य शिक्षणकी पाठ्य योजना निर्माण का सोपान

सामान्य उद्देश्य– पाठ से संबन्धित प्राप्त करने वाले उद्देश्यों को लिखेंगे

विशिष्ट उद्देश्य– विशिष्ट पाठ के उद्देश्यों को लिखेंगे जैसे

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले ज्ञान का उल्लेख करेंगे।
2. बोधात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले बोध का उल्लेख करेंगे।
3. समीक्षात्मक उद्देश्य – पूर्व ज्ञान से संबन्धित पाठ के ज्ञान का समीक्षा करेंगे।
4. सृजनात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले सर्जनात्मक ज्ञान का उल्लेख करेंगे।
5. अभिवृत्यामक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से निर्माण होने वाले रूचि, अभिवृत्ति का उल्लेख करेंगे।

सहायक सामग्री – अध्यापन में प्रयोग किए जाने वाले चित्र, अन्य कथोपयोगी सामान्य सामग्री डस्टर, चाक,रोलर, श्यामपट्ट आदि का विवरण।

पूर्वज्ञान – छात्र का अनुमानिक पूर्व ज्ञान को उल्लेख करेंगे।

प्रस्तावना – पाठ संबन्धित पूर्व ज्ञान का परीक्षण अथवा जागृत करने का प्रयत्न किया जाएगा।

पाठ्यभिसूचना – पूर्वज्ञान अनुगुण प्राप्त करने वाले नूतन ज्ञान की सूचना दी जाएगी।

आदर्श सस्वर वाचन – अध्यापक के द्वारा विशिष्ट पद्य का भावानुगुण स्वर, लय एवं शुद्ध उच्चारण के साथ वाचन किया जाएगा।

अनुकरणवाचन– छात्र के द्वारा अध्यापक का अनुरूप वाचन करना होगा

पदच्छेद – संस्कृत श्लोक का अथवा पद्य का संयुक्त पदों का सन्धि विच्छेद किया जएगा

कठिन शब्दार्थ – पद्य में विद्यमान कठिन पदों का योग्य विधियों के द्वारा अर्थ स्पष्ट किया जाएगा

शब्द	अर्थ

अन्वय – स्तरानुगुण योग्य विधि के द्वारा संस्कृत श्लोक का अथवा पद्य का गद्य रूप बताया जाएगा

भावबोध प्रश्न – पाठ का वाचन से प्राप्त बोध का परीक्षण किया जाएगा

व्याख्यान – पद्य का सविशेष ससंदर्भ व्याख्यान करेंगे

पुन: सस्वर वाचन - विशिष्ट पद्य का भावानुगुण स्वर, लय एवं शुद्ध उच्चारण के एक से अधिक छात्र अथवा पूर्ण कक्षा को एक साथ वाचन कराया जाएगा

सौन्दर्यानुभूत्यातमक प्रश्न – पूर्ण पद्य का छात्रों का सौन्दर्यानुभूत्यातमक ज्ञान का परीक्षण किया जाएगा

गृहकार्य– पठित पद्य का दृढीकरण के लिए पाठ संबन्धित सर्जनात्मक कार्य दिए जाएंगे

अपनी प्रगति की जाँच 1

1. पद्य का स्वरूप बताइए ?
2. पद्य शिक्षण का उद्देश्य बताइए ?

3.2.3. नाटक का शिक्षण

भारत में नाटय कला की उत्पत्ति वेद काल से है। वेद के उषा वर्णन, पुरुर्वा, उर्वशी, में यह स्पष्ट होता है एवं भरत का नाट्य शास्त्र जग प्रसिद्ध है। नाटक को संचार माध्यम का एक प्रभावी माध्यम भी माना जाता है। अतः नाटक शिक्षण भी शिक्षण में एक महत्वपूर्ण अंश है।

3.2.3.1. नाटक का स्वरूप

नाटक भाव अविष्कार का उत्तम साधन है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में नाटक को दृश्यकाव्य माना गया था। रूपक रूप में नाटक को दस भेदों के बांटा जाता था। विषयवस्तु की दृष्टि से नाटक को ऐतिहासिक, पौराणिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, एवं शैक्षिक आदि भेदों से बांटा जा सकता है। नाटक में संवाद गद्य में होता है कभी-कभी पद्य रूप भी देखा जाता है। जिसको गिती-नाट्य कहा जाता है।

3.2.3.2. नाटक शिक्षण का उद्देश्य

01. छात्रों ने आरोह-अवरोह के अनुसार संवाद करने की योग्यता का निर्माण करना।
02. संवाद ने निहित आशयों के अनुसार हाव-भाव निर्माण की योग्यता उत्पन्न करना।
03. अभिनव कला से परिचित कराना।
04. मानव चरित्र एवं स्वभाव का ज्ञान प्राप्त करना।

05. विभिन्न जीवन दर्शनों का ज्ञान प्राप्त करना।
06. अनुकरण की क्षमता का विकास करना।
07. भाषिक ज्ञान में विकास करना।
08. स्वतः की भावना को प्रभावी रूप मे प्रकट करने की क्षमता प्राप्त करना।
09. विभिन्न नाटक विषयक ज्ञान प्राप्त करना।
10. स्वस्थ मनोरंजन एवं हितकर उपदेशों को सहज माध्यम से प्राप्त कराना।

3.2.3.3. नाटक का शिक्षण विधियाँ

1. व्याख्या प्रणाली

इस विधि में अध्यापक समस्त नाटक का स्वयं वाचन करता है और नाटक के लेखक, पात्र, प्रयोजन, घटनाएँ, कथावस्तु, कथपो-कथन, चरित्र, चित्रण, भाषाशैली, भाव आदि पर स्वयं ही प्रवचन करता चलता है। जिससे नाटक के विभिन्न पक्षों का सौन्दर्य एवं विशेषताएँ प्रकट हो जाती है।

2. आदर्श नाट्य प्रणाली

इस विधि में अध्यापक स्वयं ही नाटक का वाचन करता है किन्तु यह वाचन वाचिक अभिनय होता है। अतः विभिन्न पात्रों के अनुकूल भाषा में उतार-चढ़ाव आ जाता है। इस प्रणाली से छात्रों से छात्रों का मनोरंजन तो होता है, परन्तु निष्क्रीय होता है।

3. रंगमंच प्रणाली

इस प्रणाली में छात्र एक-एक पात्र की भूमिका अदा करते हैं। पहले पात्र की पूरी भूमिका छात्र अभ्यास कर लेते है और बाद में सभी छात्र मिलकर पूरे नाटक को रंगमंच पर उपस्थापित करते है। यह पद्धति उत्तम है परन्तु विद्यालयों में साधनों के अभाव के वजह से प्रायः सफल नही हो पाता है।

4. कक्षा अभिनय प्रणाली

इस विधि में छात्र एक-एक पात्रों के अनुसार वांछित अभिनय करते है। प्रथमतः प्रत्येक छात्र एक पात्र का संवाद अच्छी तरह से पढ़कर समझ लेता है और बाद में कक्षा में ही पात्रों के अनुसार वाचन करते है। यह प्रणाली कक्षा की दृष्टि से अत्यन्त योग्य एवं सख्त होती है।

5.2.3.4. नाटक शिक्षण पाठ योजना

सामान्य उद्देश्य – पाठ से संबन्धित प्राप्त करने वाले उद्देश्यों को लिखेंगे

विशिष्ट उद्देश्य – विशिष्ट पाठ के उद्देश्यों को लिखेंगे जैसे

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले ज्ञान का उल्लेख करेंगे
2. बोधात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले बोध का उल्लेख करेंगे
3. समीक्षात्मक उद्देश्य – पूर्व ज्ञान से संबन्धित पाठ के ज्ञान का समीक्षा करेंगे
4. सृजनात्मक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से प्राप्त होने वाले सर्जनात्मक ज्ञान का उल्लेख करेंगे
5. अभिवृत्यामक उद्देश्य – विशिष्ट पाठ से निर्माण होने वाले रूचि, अभिवृत्ति का उल्लेख करेंगे

सहायक सामग्री – अध्यापन में प्रयोग किए जानेबाले चित्र, अन्य कथोपयोगी सामान्य सामग्री डस्टर, चाक, रोलर श्यामपट्ट आदि का विवरण..

पूर्वज्ञान – छात्र का अनुमानिक पूर्व ज्ञान को उल्लेख करेंगे

प्रस्तावना – पाठ संबन्धित पूर्व ज्ञान का परीक्षण अथवा जागृत करने का प्रयत्न किया जाएगा

विषयोपस्थापन – छात्राध्यापक अपना उद्देश्य कथन कहेगा।

पाठ्योपस्थापन –प्रस्ततु प्रकरण से संबंधित छात्राध्यापक छात्रों से प्रश्न करता जायेगा और श्यामपट्ट पर लिखता जायेगा।

आदर्शवाचन – छात्राध्यापक संपूर्ण पाठ का उचित आरोह –अवरोह युक्त स्वर एवं समुचित भाव-भंगिमा के साथ वचन करेगा तथा छात्र मनोयोगपूर्वक सुनेंगे।

अनुकरणवाचन – कतिपय छात्र पृथक-पृथक पात्र की विषयवस्तु का पाठ करेंगे।

बोध प्रश्न – छात्राध्यापक छात्रों से बोध प्रश्न पूछेगा तथा छात्र प्रश्नों के उत्तर देंगे।

व्याख्या – पद्य का सविशेष ससंदर्भ व्याख्यान करेंगे, कठिन पदों को अधोलिखित प्रक्रिया से स्पष्ट करेंगे।

पद	अर्थ	प्रणाली

पात्राभिनय वाचन – विशिष्ट पात्र संलाप का भावानुगुण छात्रों द्वारा पाठ का पात्रानुसार अभिनय पूर्वक वाचन कराया जाएगा

भाव विश्लेषणत्मक प्रश्न – पूर्ण नाटक का छात्रों का भाव विश्लेषणत्मक ज्ञान का परीक्षण किया जाएगा

गृहकार्य–नाटक संबन्धित का दृढी करण के लिए पाठ संबन्धित सर्जनात्मक कार्य दिये जाएंगे

अपनी प्रगति की जाँच – 1

1. नाटक का स्वरूप बताइए ?

2. नाटक का शिक्षण की पाठ्य योजना का सोपानों को स्पष्ट करें विधियाँ बताइए ?

3.2.4. रचना का शिक्षण

छात्र भाषणात्मक अभिव्यक्ति में बहुत-कुछ बोलने में समर्थ होता है परन्तु अपने विचारों को लेखन के जरिऐ अभिव्यक्त करने में उतना समर्थ नही हो पाता। अतः रचना शिक्षण का महत्व है। अतः रचना का अर्थ वाक्यों को सजाना, बनाना, क्रमबध्य करना भी कहा जा सकता है।

3.2.4.1. रचना का स्वरूप

शिशु बहुत सारे शब्द कहता है वाक्य भी बनाता है। परन्तु कभी-कभी वह वाक्य सार्थकता, आकांक्षा, विचारों, भावों की दृष्टि से योग्य नही होता है। अतः वाक्य रचना में कई सारी विशेषताएँ होती है। जैसा कि पदक्रम, स्पष्टता, आंकाक्षा, सामर्थ्य, मधुरता आदि है। पदक्रम में कर्ता, कर्म, क्रिया आदि कारकों आकांक्षाओं से , श्रोता की उत्कण्ठा शान्त होनी अनिवार्य है। सामर्थ्य की दृष्टि से वाक्य, श्रोता के अवगम योग्य हो एवं मधुरता की दृष्टि से वाक्य कर्ण कटु न हो। इन विशेषताओं के साथ वाक्य रचना के पश्चात उन वाक्यों को विविध विधाओं में रचना पढ़ता है। जो कि रचना की विधाएँ होती है ये विधाएँ अनुछेच्द रचना, पद्य रचना, वाक्य रचना, मधूरचना, प्रश्न की रचना आदि हो सकती है।

3.2.4.2. रचना शिक्षण का उद्देश्य

01. सरल शब्दों से अपने भावों को व्यक्त करने में समर्थ बनाना।
02. प्रश्नों के उत्तर व्यस्थित रूप से देने में समर्थ होना।
03. छात्रों में शुद्ध, स्पष्ट, सुन्दर लिखने की क्षमता का निर्माण करना।
04. स्वतः का भाव प्रभावी शब्दों में लिखकर व्यक्त करने में समर्थ होना।
05. लेखन में सुक्तियों, लोकोक्तियों तथा मुहावरों का प्रयोग में समर्थ करना।
06. दीर्घ अनुच्छेदों का सारांश लिखने में समर्थ होना।
07. किसी भी विषय पर अपने विचारों के साथ अनुच्छेद निर्माण होने में समर्थ होना।
08. संवाद लिखने की क्षमता विकसित करना।
09. प्रभावी पत्र लेखन की क्षमता निर्माण करना।
10. लघु पद्यों के निर्माण करने में समर्थ होना।

3.2.4.3. रचना का शिक्षण विधियाँ

1. चित्र-लेखन विधि

इस विधि में अध्यापक छात्रों को नही, पक्षि, सूर्य, वृक्ष, फल, पुष्प, इत्यादियों का चित्र दिखाकर प्रश्न करता है। उन प्रश्नों का उत्तर छात्र पूर्ण वाक्यों में देने का प्रयत्न करता है।

2. प्रश्नोत्तर विधि

इस विधि में अध्यापक छात्रों के अनुभव संम्बन्धित विषयों से प्रश्न पूछता है। छात्र अपने अनुभव एवं कल्पना से लघु-लघु वाक्यों के द्वारा शुद्ध स्पष्ट शब्दों में उत्तर लिखता है एवं अध्यापक उसके वाक्य संरचनागत त्रुटियों में सुधार करता है।

3. शून्य स्थान पूर्ति विधि

इस विधि में अध्यापक छात्रों के संम्मुख रिक्त स्थान युक्त वाक्य अथवा अनुच्छेद उपस्थापन करता है। उन शून्य स्थानों को कई विकल्प शब्दों से पूर्ण किया जा सकता है। छात्र अपने शब्द शक्ति के सहायता से शून्य स्थानों को भरता है और वाक्य पूर्ण करता है।

4. शब्द परिवर्तन विधि

इस विधि में अध्यापक ऐसे कुछ वाक्य अथवा अनुच्छेदों को प्रस्तुत करता है, जिसमें कई शब्द अधो रेखांकित होते है। छात्रों को अधो रेखांकित शब्दों के जगह किसी नूतन शब्द का प्रयोग करना होता है और अपने विचारों, स्मृति एंव शब्द शक्ति के द्वारा उन शब्दों के जगह नूतन शब्द लिखता है।

5. प्रश्न रचना विधि

इस विधि में अध्यापक उत्तरात्मक वाक्य एवं अनुच्छेदों का उपस्थापन करता है एवं अनुच्छेद से अलग-अलग प्रकार के प्रश्न निर्माण करने के निर्देश देता है। छात्र अपने प्रश्नात्मक क्षमता से कई सारे प्रश्न निर्माण करते है।

3.2.4.4. रचना शिक्षण की पाठ्य योजना निर्माण का सोपान

सामान्य उद्देश्य – रचना से संबन्धित प्राप्त करने वाले उद्देश्यों को लिखेंगे

विशिष्ट उद्देश्य – विशिष्ट रचना के उद्देश्यों को लिखेंगे जैसे

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य – विशिष्ट रचना से प्राप्त होने वाले ज्ञान का उल्लेख करेंगे
2. बोधात्मक उद्देश्य – विशिष्ट रचना से प्राप्त होने वाले बोध का उल्लेख करेंगे
3. समीक्षात्मक उद्देश्य – पूर्व ज्ञान से संबन्धित रचना के ज्ञान का समीक्षा करेंगे
4. सृजनात्मक उद्देश्य – विशिष्ट रचना से प्राप्त होने वाले सर्जनात्मक ज्ञान का उल्लेख करेंगे
5. अभिवृत्यामक उद्देश्य - विशिष्ट रचना से निर्माण होने वाले रूचि, अभिवृत्ति का उल्लेख करेंगे

सहायक सामग्री – चित्र,माडल आदि।

पूर्वज्ञान – छात्र का आनुमानिक पूर्व ज्ञान को उल्लेख करेंगे।

प्रस्तावना – पाठ संबन्धित पूर्व ज्ञान का परीक्षण अथवा जागृत करने का प्रयत्न किया जाएगा।

विषयोपस्थापन–छात्राध्यापक श्यामपट्ट पर विषय से संबंधित शब्दों को लिखेगा और उन शब्दों का मौखिक रूप से बतायेगा . छात्र उन शब्दों के आधार पर वाक्य रचना, अनुच्छेद आदि लिखेंगे।

अध्यापकन कथन – छात्राध्यापक छात्रों से प्रश्न पूछेंगे और छात्र उनके प्रश्नों का उत्तर देंगे।

कक्षाकार्य – श्यामपट्ट पर लिखे शब्दों के आधार पर छात्रों को वाक्यरचना अनुच्छेद कहने को कहेंगे। छात्र वाक्य रचना/अनुच्छेद लिखेंगे।

संशोधन – एक-दो छात्रों को दिए गए कक्षाकार्य को पढ़ने को कहेगा। छात्र उस कक्षाकार्य को पढ़ेगा जो गलती हुई होगी छात्राध्यापक तत्काल संशोधन कराएगा। शेष कापियों को वह बाद में देखेगा।

गृहकार्य–रचना संबन्धित का दृढीकरण केलिए पाठ संबन्धित सर्जनात्मक कार्य दिए जाएंगे

अपनी प्रगति की जाँच - 1

1. रचना का स्वरूप बताइए ?
2. रचना शिक्षण का उद्देश्य बताइए ?

3.2.5. व्याकरण का शिक्षण

किसी भी भाषा में व्याकरण का स्थान महत्वपूर्ण है। भाषा और व्याकरण एक दुसरे से अन्योन्याश्रित है। भाषा का विन्यास की दृष्टि से भी व्याकरण का विशेष महत्व है। अतः भाषा में परिपक्वता प्राप्त करने के लिए व्याकरण शिक्षण की आवश्यकता है।

3.2.5.1. व्याकरण का स्वरूप

व्याकरण शब्द व्या, आ, उपसर्ण, कृ, धातु, ऋ प्रत्यय से बनता है। जिसका अर्थ ‘‘व्याक्रियन्ते, व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः अनेन इति व्याकरण’’ जिसके द्वारा अर्थ स्वरूप से शब्द सिद्ध होता है। पतंजलि के शब्दों में ‘‘शब्दानुशासन ही व्याकरण है।’’

अर्थात जिसके द्वारा भाषा को व्यवस्थित किया जाता है। दार्शनिकों ने जो भाषा के स्वरूप, संरचना तथा कार्यों को स्पष्ट करता है उसको व्याकरण कहते है व्याकरण में शब्द के स्वरूप, शब्दार्थ-संम्बन्ध, वाक्य संरचना, आदि विषयों पर कार्य किया जता है। व्याकरण में वर्ण, शब्द, वाक्य, वर्णों का उच्चारण, शब्दों के प्रत्यय एवं उपसर्ग, वाक्य में पदक्रम एवं कारक वाक्य की भिन्न-भिन्न विधाएँ आदि तत्वों के ऊपर ध्यान दिया जाता है।

3.2.5.2. व्याकरण शिक्षण का उद्देश्य

01. ध्वनि शास्त्र को समझने में छात्रों को समर्थ बनाना।
02. शब्द एवं धातुओं के विभिन्न रूपों को जानने में समर्थ बनाना।
03. शुद्ध वाक्य निर्माण करने योग्यता उत्पन्न करना।

04. छात्रों में तर्क शक्ति निरीक्षण, क्षमता का विकास करना।
05. भाषा संम्बन्धित गुण दोष को समझने की क्षमता उत्पन्न करना।
06. नूतन शब्दों का निर्माण करने में समर्थ बनाना।
07. व्याकरण तत्वों को भाषा में प्रयोग करने की क्षमता विकसित करना।
08. विशिष्ट साहित्यों का अर्थग्रहण करने योग्य बनाना।
09. उच्चारण और लेखन के बीच संम्बन्ध स्थापन में समर्थ बनाना।
10. एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करने में समर्थ बनाना।

3.2.5.3. व्याकरण शिक्षण का विधियाँ

01. पाठ्य पुस्तक प्रणाली

इस प्रणाली में व्याकरण पुस्तक को सस्वर पुस्तक वाचन कराया जाता है। एवं पाठ्य-पुस्तक को आधार बनाकर बिना समझ से व्याकरण के नियमों, उपनियमों को रटाया जाता है। यह विधि अमनोवैज्ञानिक होता हे। इस विधि को पारायण विधि भी कहाँ जाता है।

02. अव्याकृति प्रणाली

इस विधि में व्याकरण मे शिक्षा की अलग महत्व स्वीकार नही किया जाता। अत: उत्तम व्याकरण निष्ट रचनाओं के अध्यापन से ही व्याकरण सीखाया जाता है। क्योंकि उत्तम रचनाओं के अध्ययन से भाषा पर अधिकार पाया जा सकता है। यह विधि छोटी कक्षाओं के लिए निरर्थक सिद्ध होगा।

03. निगमन विधि

इस पद्धति में प्रथमत: व्याकरण के नियमों को स्पष्ट किया जाता है, तत्पश्चात नियमों का उदाहरण के सहायता से पूष्टि की जाती है। अर्थात् नियमों का अथवा सिद्धांन्तों का व्यवहार में उपयोग संम्बन्धित ज्ञान दिया जाता है। यह पद्धति सामान्य से विशेष की ओर शिक्षण सूत्र पर आधारित है। परन्तु यह प्रणाली ऊँची कक्षाओं के लिए योग्य होती है।

04. आगमन पद्धति –

यह पद्धति उदाहरणों से सूत्रों की ओर शिक्षण सूत्र के ऊपर आधारित है। इस विधि में प्रथमत: उदाहरणों का उपस्थापन किया जाता है। तत्पश्चात उदाहरणों के विश्लेषण से सामान्य गुण धर्मो का एकत्रिकरण किया जाता है। सामान्य गुण धर्मों का सामान्यीकरण से सिद्धान्तों अथवा नियम का निर्धारण किया जाता है। एकं निर्धारित नियम का पाठ्य-पुस्तकों में लिखित सिद्धांन्तों के साथ समन्वय किया जाता है। यह विधि निगमन विधि के विपरीत विधि है।

3.2.5.4. व्याकरण शिक्षण की पाठ्ययोजना निर्माण का सोपान

अपनी प्रगति की जाँच - 1

1. निगमन विधि का स्वरूप बताइए ?

2. व्याकरण शिक्षण का उद्देश्य बताइए ?

व्याकरण पाठयोजना क्रम

1. **सामान्य प्रारंभिक बातें** - पाठ से संबन्धित प्राप्त करने वाले उद्देश्यों को लिखेंगे

2. विशिष्ट उद्देश्य– विशिष्ट पाठ के उद्देश्यों को लिखेंगे जैसे-

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य – व्याकरण पाठ से प्राप्त होने वाले ज्ञान का उल्लेख करेंगे।
2. बोधात्मक उद्देश्य – व्याकरण पाठ से प्राप्त होने वाले बोध का उल्लेख करेंगे।
3. समीक्षात्मक उद्देश्य – पूर्वज्ञान से संबन्धित व्याकरण पाठ के ज्ञान की समीक्षा करेंगे।
4. सृजनात्मक उद्देश्य – व्याकरण पाठ से प्राप्त होने वाले सर्जनात्मक ज्ञान का उल्लेख करेंगे।
5. अभिवृत्यामक उद्देश्य - व्याकरण पाठ से निर्माण होने वाले रूचि, अभिवृत्ति का उल्लेख करेंगे।

3. सहायक सामग्री – अध्यापन में प्रयोग किए जाने वाले चित्र, अन्य कथोपयोगी सामान्य सामग्री डस्टर, चाक, रोलर, श्यामपट्ट आदि का विवरण।

4. पूर्वज्ञान – छात्र का अनुमानिक पूर्व व्याकरण ज्ञान का उल्लेख करेंगे।

5. प्रस्तावना –पूर्व पठित प्रकरण आवृत्यात्त्मक प्रश्न जिससे पहले की सामग्री को दोहराया जा सके. तत्पश्चात आवश्यकतानुसार उद्देश्य-कथन।

6. पाठ्योस्थापन – प्रस्तुत प्रकरण से संबंधित कई उदाहरण प्रस्तुत किये जायेंगे। यह सोपान उदाहरण तथा तुलना का है।

नोट-आगमन रीति से व्याकरण कि शिक्षा देने में प्रस्तावना एवं पाठ्योपस्थापन में ही सर्वाधिक समय लगेगा। इसे शिक्षण-दोष न संघ जाय।

7. नियम – निर्धारण-प्रस्तुत उदाहरणों के आधार पर सामान्य नियम अध्यापक छात्रों कि सहायता से निकलेगा और बाद में सूत्र रूप मवन श्यामपट पर लिख देगा।

8. पुनरावृत्ति – उदाहरण के रूप में प्रस्तुत संस्कृत वाक्यों का छात्र हिंदी में अनुवाद करें और उपर्युक्त नियमों का प्रयोग करें। प्रस्तुत नियम से संबंधित कुछ हिंदी वाक्य अध्यापक श्यामपट पर लिखे और छात्रों को यह निर्देश दें कि उन हिंदी वाक्यों का वे संस्कृत में अनुवाद करें।

9. गृहकार्य – गृहकार्य के रूप में लिखित कार्य दिए जा सकते है।

3.3. सारांश

किसी साहित्य के अन्तर्गत विविध विधाओं का समावेश देखा जा सकता है। संस्कृत साहित्य की विविध विधाओं में गद्य ,पद्य, नाटक, काहानी, कथा, रचना आदि आतें है। उन विधाओं को सीखाने के लिए विशिष्ट बिधियाँ भी है। गद्य के लिए अनुवाद पद्धति, अर्थ कथन पद्धति, व्याख्या विधि, विश्लेषण विधि, संयुक्त विधियाँ आदि विधियाँ पद्य के लिए गीत तथा अभिनय प्रणाली, अर्थबोध प्रणाली, व्याख्या प्रणाली, खण्डान्वय प्रणाली, व्यास प्रणाली, नाटक के लिए व्याख्या प्रणालि, आदर्श नाट्य प्रणाली, रंगमंच प्रणाली, कक्षा अभिनय प्रणाली, व्याकरण के लिए पाठ्य पुस्तक प्रणाली, अव्याकृति प्रणाली, निगमन विधि, आगमन पद्धति एवं रचना के लिए चित्र-लेखन विधि, प्रश्नोत्तर विधि, शून्य स्थान पूर्तिविधि, शब्द परिवर्तन विधि, प्रश्नरचना विधि उपयुक्त मानी जाती है। सभी विधाओं के लिए विशिष्ट पाठ्ययोजनाएँ भी बनती है।

3.4 अपनी प्रगती की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

अपनी प्रगति की जाँच –
उत्तर- अध्याय 3.2 देखे ।

3.5. शब्दावली

गद्य शिक्षण –गद्य शिक्षण का मुख्या उद्देश्य विद्यार्थियों को ज्ञान, अर्थ बोध, शब्द भंडार वृद्धि में सहायता पहुँचाना,

मुखर्जी

पाठ्यपुस्तक विधि – "पाठ्यपुस्तक विधि शिक्षण की वह प्रक्रिया है, जिसका तत्कालीन उद्देश्य पाठ्यपुस्तक में निहित सूचनाओं की समझदारी प्रदान करना होता है।"

- वेस्ले ई. बी.

व्याख्यान विधि – बड़ी कक्षाओं में प्रयोग की जाने वाले पद्धति व्याख्यान एक व्यावहारिक विधि है।"

- बाईनिंग एवं बाईनिंग

नाट्य रूपांतरण विधि –"अभिनय का अर्थ अतीत या वर्तमान की किसी स्थिति को क्रिया और जीवन देना है। इसका प्रयोग जिस विधि में किया जाता है, उस विधि को नाट्य रूपांतरण या भूमिका अभिनय विधि कहा जाता है।"

3.6. कार्य आवंटन

1. व्याकरण शिक्षण की विधियों को स्पष्ट कीजिए।
2. छात्र का रचनात्मक विकास में प्रभावी उपाय स्पष्ट कीजिए।

3.7. क्रियाएं

1. गद्य शिक्षण की विभिन्न विधियों की उपयोगिता का वर्णन कीजिए।
2. नाटक शिक्षण की भाषा शिक्षण में भूमिका बताईय।

3.8. प्रकरण अध्ययन (केस स्टडी)

1. व्याकरण शिक्षण एवं पद्य शिक्षण के पाठ्ययोजनाओं की तुलना करें।
2. रचना शिक्षण में पाठ्य योजना की भूमिका स्पष्ट कीजिए।

3.9. संदर्भ पुस्तके

01. सक्सेना, राधारानी, ((2013,"नवाचारी शिक्षण पद्धतियाँ", जयपुर, राजस्थान संस्कृत ग्रन्थ अकादमी।
02. गुप्त, मनोरमा – भाषा अधिगम, केंद्रीय संस्कृत संस्थान,आगरा
03. गुनानंद- संस्कृत भाषा का उद्भव और विकास, विनोद पुस्तक मंदिर , आगरा
04. द्विवेदी, देवीशंकर – भाषा और भाषिकी, भाषा-विज्ञान-विभाग,सागर वि.वि , सागर
05. पांडेय, रामाशकल –संस्कृत शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा
06. चतुर्वेदी, शिखा – संस्कृत शिक्षण, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
07. शर्मा, देवेन्द्रनाथ – भाषा विज्ञानं की भूमिका,राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
08. तिवारी, भोलानाथ, भाषा विज्ञान, चौखम्बा प्रकाशन, वारणासी
09. शर्मा, लक्ष्मनाराय़ण, सिंह फतेह, संस्कृतशिक्षणं नविन प्रविधयः,आदित्यप्रकाशन, जयपुर
10. मित्तल, संतोष, संस्कृत शिक्षणम, नवचेतना पब्लिकेशनस्, जयपुर
11. सफाया, रघुनाथ, संस्कृत शिक्षण, हरयाणा ग्रन्थ अकादमी.
12. पाण्डेय, रामशकल, संस्कृत शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
13. विश्वासः,कौशल बोधिनि, संस्कृत भारती, दिल्ली
14. शर्मा, मुरलीधर, संस्कृत शिक्षण समस्या, रा.सं.सं विद्यापीठ, तिरूपति
15. सिंह, कर्ण, संस्कृत शिक्षण विधि,एच्. पि. भार्गव बुक सेंटर, आगरा

इकाई –4
पाठ्य पुस्तक एवं सहगामी क्रिया

इकाई की रूपरेखा

4.0. इकाई परिचय

4.1. शिक्षण के उद्देश्य

4.2. विषय विवेचन

- 4.2.1.पाठ्यपुस्तक
  - 4.2.1.1. पाठ्यपुस्तकों का अर्थ
  - 4.2.1.2. पाठ्यपुस्तकों का महत्व
  - 4.2.1.3. संस्कृत पाठ्य पुस्तकों का उद्देश्य
  - 4.2.1.4. पाठ्य पुस्तक का गुण
  - 4.2.1.5. पाठ्य-पुस्तकों की समीक्षा
- 4.2.2. पाठ्य-सहगामी क्रिया
  - 4.2.2.1. पाठ्यसहगामी क्रिया का अर्थ
  - 4.2.2.2. पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्व
  - 4.2.2.3. भाषा से सम्बन्धित पाठ्य सहगामी क्रियाएँ
- 4.2.3. दृश्य-श्रव्य उपकरण
  - 4.2.3.1. श्रव्य-दृश्य साधनों का तात्पर्य
  - 4.2.3.2. भाषा में श्रव्य-दृश्य साधनें
- 4.2.4. संस्कृत भाषा शिक्षक
  - 4.2.4.1. संस्कृत भाषा शिक्षक के सामान्य गुण
  - 4.2.4.2. संस्कृत भाषा शिक्षक के विशिष्ट गुण

4.3. सारांश

4.4. अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

4.5. शब्दावली

4.6. कार्य आवंटन

4.7. क्रियाएँ

4.8. प्रकरण अध्ययन

4.9. संदर्भ पुस्तकें

4.0. इकाई परिचय

पाठ्यपुस्तक शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति का एक प्रभावी साधन है। शिक्षा निर्धारित उद्देश्यों के आधार से अध्ययन-अनुभव पर अवलंबन होती है। उन अध्ययन-अनुभवों की संप्राप्ति में पाठ्यपुस्तक बहुतांश से उपयोगी सिद्ध होता है। अतः इस अध्याय में पाठ्यपुस्तक का महत्व, निर्माण, गुणवत्ता आदि विषयों को ध्यान दिया गया है। पाठ्यपुस्तक के साथ साथ पाठ्य-सहगामी क्रिया एवं दृश्य-श्रव्य उपकरणों का भी प्रकार, महत्व तथा विशेषताएँ बताए गए हैं एवं संस्कृत भाषा शिक्षक के विशिष्ट गुणों पर भी प्रकाश डाला गया है।

4.1. शिक्षण के उद्देश्य

इस इकाई के पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित विषयों में सक्षम होंगे :

01. संस्कृत शिक्षण का पाठ्यक्रम के विभिन्न विधायों का ज्ञान प्राप्त करना।

02. पाठ्यपुस्तक के विभिन्न गुणों का ज्ञान प्राप्त करना।

03. संस्कृत शिक्षण में प्रयुक्त विभिन्न पाठय-सहगामी क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करना।

04. पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्व का ज्ञान प्राप्त करना।

05. संस्कृत शिक्षण में प्रयुक्त विभिन्न दृश्य-श्रव्य साधनों का ज्ञान प्राप्त करना।

4.2. विषय विवेचन

4.2.1.पाठ्यपुस्तक

प्राचीन भारत में पाठ्य-पुस्तक के लिए ग्रन्थ शब्द का प्रचलन था। ग्रन्थ का अर्थ है, बाँधना, गूँथना नियमित ढंग से जोड़ना क्रम से रखना आदि। भोजपत्र या ताड़पत्र को आचार्य लोग अपने शिष्यों के समक्ष क्रम से रखते थे। उनमें बीच में छेद करके किसी धागे से गूँथ भी देते थे। इसीलिए उन्हें ग्रन्थ कहा जाता था। अंग्रेजी का 'बुक' शब्द जर्मन भाषा के 'बीक' ; शब्द से व्युत्पन्न माना जाता है, जिसका अर्थ है- वृक्ष। फ्रांसीसी भाषा में भी इसका सम्बन्ध वृक्ष की छाल या तख्ती पर लिखने से है।

4.2.1.1. पाठ्य-पुस्तकों का अर्थ

पाठ्यपुस्तक का अर्थ है पढने और पढाने योग्य पुस्तक और इस अर्थ में की भी पुस्तक, जो पढने-पढाने योग्य है, पाठ्यपुस्तक कही जा सकती है। किन्तु आजकल पाठ्यपुस्तक शब्द का प्रयोग एक विशिष्ट प्रकार की पुस्तक के लिए रुढ हो गया है। विश्व के विभिन्न विद्वानों ने पाठ्यपुस्तकों के अर्थ को स्पष्ट करने का प्रयास किया है और उन्होंने पाठ्यपुस्तक को परिभाषा से बाँधने की भी चेष्टा की है। जैसे

एक निश्चित पाठ्यक्रम के अध्ययन के प्रमुख साधन के रूप में एक निश्चित शैक्षिक स्तर पर प्रयुक्त करने के लिए एक निश्चित विषय पर व्यवस्थित ढंग से लिखी हुई पुस्तक पाठ्यपुस्तक है। गुड

किसी संस्था या परीक्षा समिति की ओर से किसी कक्षा के छात्रों के पढने के लिए निर्धारित पुस्तक। **बृहत् संस्कृत कोष**

कक्षा में प्रयोग के लिए बनायी गई, संम्बन्धित क्षेत्र के विशेषज्ञों द्वारा सावधानी से तैयार की गयी तथा सामान्य अध्यापन विधियों से युक्त पुस्तक। **वेकन**

पाठ्यपुस्तक उस पुस्तक का नाम है जो किसी पाठ्यक्रम में दिए हुए विषयों को सिखाने के आधार रूप मे प्रयुक्त की जाए। - **दी राइटर्स हैंडहुक फार दी डेवलपमेन्ट ऑफ एजूकेकेशनल मेटीरियल्स**

पाठ्य-पुस्तकों की आवश्यकता साधन रूप में ही है, साध्य रूप में नहीं। पाठ्य-पुस्तकों को साध्य मान लेने से इनको रटना एवं सम्पूर्ण शिक्षा को किताबी बना देना महत्वपूर्ण हो जाता है, किन्तु पाठ्य-पुस्तकों का उद्देश्य रटना नहीं है। इनके महत्व निम्नलिखित हैं –

4.2.1.2. पाठ्य-पुस्तकों का महत्व

01. पाठ्य-पुस्तकों में अनेक प्रकार की सूचनाएँ एक ही स्थान पर मिल जाती है अतः सूचनाओं के संग्रह के लिए इनकी आवश्यकता है।
02. इनके प्रयोग से पाठ को पढ़ने और पढ़ाने में सहायता मिलती है।
03. पठित पाठ को पुनःस्मरण करने-कराने में ये सबल साधन है।
04. इनसे ज्ञानोपार्जन में सहायता प्राप्त होती है।
05. अध्यापक अपनी सुविधानुसार बालकों की योग्यता का ध्यान रखते हुए शिक्षा दे सकें, इसके लिए पाठ्य-पुस्तकों की आवश्यकता है।
06. छात्रों को गृह-कार्य देने में सुविधा होती है।
07. भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करने के लिए पाठ्य-पुस्तकों का होना अति आवश्यक है। इनकी आवश्यकता अध्यापक और छात्र दोनों को है।
08. सम्पूर्ण कक्षा को एक साथ पढ़ाने में पाठ्य-पुस्तकें बड़ी उपयोगी होती है। इनकी सहायता से एक अध्यापक अनेक छात्रों को एक साथ सरलता से पढ़ा सकता है। इससे समय और शक्ति का अपव्यय नहीं होता है।
09. बालकों की कल्पना-शक्ति को विकसित करता है।
10. उनके ज्ञान की सीमा को विस्तृत करता है।
11. उनमें स्वाध्याय के प्रति रूचि को उत्पन्न करता है।

4.2.1.3. संस्कृत पाठ्य-पुस्तकों का उद्देश्य

1. अलग अलग विषयों में अभिव्यक्ति प्रकट करने के लिए भाषा का ज्ञान कराना।

2. विभिन्न प्रकार ज्ञान विज्ञान विषयों का आविष्कार करने के लिए भाषा शक्ति का विकास करना।
3. सांस्कृतिक ऐतिहासिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक, सामाजिक विषयों का परिचय प्राप्त कराना।
4. संस्कृत अध्ययन के लिए विशेष रूचि निर्माण करना।
5. संस्कृत भाषा के साहित्य के विशिष्ट लेखन शैलीयों का परिचय कराना।
6. संस्कृत साहित्य का विभिन्न विधाओं का परिचय कराना।

4.2.1.4. पाठ्यपुस्तक का गुण

एक अच्छी पाठ्य-पुस्तक की कुछ विशेषताएँ होती हैं, वे ही विशेषताएँ उसके गुण का निर्धारण करती है। पाठ्य-पुस्तकों के गुण को हम मुख्य रूप से दो दृष्टियों से देख सकते है। इन्हें पुस्तकों के गुणों के दो रूप भी कहा जाता है। ये है -

1. आभ्यन्तरिक
2. बाह्य

आभ्यन्तरिक गुण पुस्तक के वे भीतरी गुण है, जो उसकी भाषा, शैली, पाठ्य-विषय आदि की दृष्टि से होते हैं। बाह्य गुणों में पुस्तक का आवरण, मुद्रण, साज-सज्जा आदि होते हैं। पाठ्यपुस्तकों के मुख्य गुण निम्नलिखित हैं –

01. सोद्देयता

प्रत्येक पाठ्यपुस्तक की रचना कुछ उद्देश्यों को ध्यान में रखकर की जानी चाहिए। पुस्तक में इन उद्देश्यों को पूरा करने की प्रेरणा विद्यमान होनी चाहिए। भाषा की पाठ्य-पुस्तक का उद्देश्य भूगोल और विज्ञान का ज्ञान देना नहीं होता। अतः ऐसे विषयों पर आधारित पाठों का उद्देश्य केवल जानकारी प्रदान करना न होकर भाषा-ज्ञान बढ़ाना है। अतः पाठों को भाषाज्ञान वृद्धि का उद्देश्य पूरा करना चाहिए।

02. उपयुक्तता

मनोवैज्ञानिक, दृष्टि से मानव-व्यक्तित्व के विकास की कई अवस्थाएँ है; जैसे बाल्यावस्था, किशोरावस्था, प्रौढ़ावस्था आदि। इन अवस्थाओं की सामान्य प्रवृतियों के अनुकूल विषयों पर आधारित पाठ उपयुक्त होते है।

03. विषय विविधता

एक ही प्रकार के विषय पर आधारित अनेक पाठों की अपेक्षा अनके विषयों पर आधिारित पाठ अच्छे होते है। इस प्रकार साहित्य की विभिन्न विधाओं का पुस्तक में प्रतिनिधित्व होना चाहिए। गद्य, पद्य, नाटक कहानी, निबन्ध आदि सभी विषयों पर पाठ होने चाहिए।

04. रोचकता

जिन विषयों में छात्रों की रूचि होती है, उनके अध्ययन में वे ऊबते नहीं और उन्हें शीघ्र समझ लेते हैं! रूचि का सिद्धांत आज का एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है और इस सिद्धांत को शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में व्यवहृत किया जाना चाहिए।

05. जीवन से सम्बद्धता

पाठ्य-पुस्तक में आए हुए विषय जीवन से सम्बन्धित होने चाहिए। जीवन से असम्बद्ध विषयों को सीखने में छात्रों को कठिनाई होती है।

06. क्रमबद्धता

पाठ्यपुस्तकों के पाठ क्रमबद्ध होने चाहिए। यह क्रम छात्रों की आयु के अनुसार होना चाहिए तथा विषयों को 'सरल से कठिन की ओर' के सिद्धांत के आधार पर व्यवस्थित करना चाहिए।

07. आदर्शवादिता

पाठ्यपुस्तक में कुछ पाठ ऐसे हों जो विद्यार्थी को नया सन्देश, नयी प्रेरणा एवं नये आदर्श प्रदान करने में सक्षम हों।

08. व्यावहारिकता

कुछ पाठ ऐसे भी होने चाहिए जो बालक की व्यावहारिक बुद्धि को विकसित कर सकें और उसे लोकाचार की शिक्षा दे सकें।

09. स्तरानुकूलता

पाठ्य-पुस्तकों की भाषा छात्रों के अनुकूल होनी चाहिए। प्रारम्भिक कक्षाओं में इनकी भाषा बहुत सरल हो और शनैःशनैः व्यवस्थानुसार भाषा के स्तर को बढ़ाया जाय।

10. शुद्धता

भाषा की दृष्टि से पाठ्यपुस्तकों को शुद्ध होना चाहिए। यदि पुस्तक की ही भाषा अशुद्ध है तो यह आशा कैसे की जा सकती है कि छात्र उन्हें पढ़कर भाषा पर अधिकार कर सकेंगे।

11. सार्थकता

पाठ्यपुस्तक का प्रत्येक शब्द सार्थक हो, प्रत्येक वाक्य तथा प्रत्येक अनुच्छेद सार्थक हो। ऐसा न हो कि शब्द, वाक्य और अनुच्छेद अनावश्यक रूप से ठूँस दिए गए हों। अनावश्यक शब्दों या वाक्यों को पुस्तक में स्थान नहीं मिलना चाहिए।

12. सुसम्बद्धता

पुस्तक का प्रत्येक वाक्य दूसरे वाक्य से सम्बन्धित हो। एक अनुच्छेद का दूसरे अनुच्छेद से सम्बन्ध हो। एक अनुच्छेद के अन्दर विभिन्न वाक्य एक-दूसरे से सम्बद्ध होने चाहिए।

13. भाषाधिकार वर्द्धकता

पाठ्यपुस्तकों की भाषा ऐसी होनी चाहिए कि छात्रों के शब्द-भण्डार में वृद्धि और उनका भाषा पर अधिकार बढ़ सके।

14. मौलिकता

पाठ्य-पुस्तक के पाठों में मौलिकता को छिन्न-छिन्न नहीं किया जाना चाहिए। कभी-कभी अध्यापक संकलन करते समय लेखक के मूल लेख को छोटा कर देते हैं और लेख को इस प्रकार मौलिकता विहीन कर देते है, ऐसा नहीं होना चाहिए। जो पाठ नये लिखे जायें, उनमें ध्यान रहे कि अभिव्यक्ति की नवीनता बनी रहे।

15. शैलीगत विविधता

प्रत्येक पाठ्पुस्तक में विभिन्न साहित्यिक विधाएँ तो होनी ही चाहिए, किन्तु उन पाठों में श्रृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, भयानक, वीर, शान्त आदि विविध रसों की कविताएँ हों और दोहा, चैपाई, कवित्त, सवैय, पद, तुकान्त-अतुकान्त आदि विविध छन्द हों।

16. नाम

पाठ्यपुस्तक के बाह्य गुणों में नाम का भी प्रभाव पड़ता है। पुस्तक का नाम सरल, संक्षिप्त स्पष्ट एवं आकर्षक हो। उससे विषय का भी किंचित आभास मिल जाना चाहिए।

17. आकार

पाठ्य-पुस्तक में पाठों का आकार बहुत छोटा या बड़ा न रहे। इस प्रकार सम्पूर्ण पुस्तक का आकार भी न बहुत छोटा रहे, न बड़ा। छोटी कक्षाओं में पृष्ठ संख्या कम रहे, किन्तु बड़ी कक्षाओं में यह संख्या धीरे-धीरे बढ़ती जाय।

18. कागज

कागज बहुत पतला न हो और ऐसा न हो जिसकी चमक आँखों पर पड़े। यह इतना पुराना भी न हो कि शीघ्र फट जाय और छात्र को वर्ष में दो बार नई किताब खरीदनी पडे। छोटी कक्षाओं में बड़े आकार के कागज की पाठ्य-पुस्तक हो सकती है।

19. मुद्रण

पुस्तक की छपाई शुद्ध होनी चाहिए। अक्षर बहुत छोटे न हों। प्रारम्भिक कक्षाओं में मोटे अक्षरों में छपाई हो और धीरे-धीरे ऊपर की कक्षाओं में अक्षर बारीक हो सकते है। अभ्यासार्थ दिये प्रश्नों के अक्षर मूल पाठ के अक्षर से भिन्न हों। शीर्षकों के लिए लिए भी अलग टाइप के अक्षर हों। शब्दों के बीच की दूरी एक वाक्य से दूसरे वाक्य की दूरी, अनुच्छेद-योजना आदि पर भी ध्यान रहे।

20. चित्र

चित्रों से विषय स्पष्ट हो जाते हैं। पुस्तक की उपयोगिता में वृद्धि के लिए चित्र होने चाहिए। प्रारम्भिक कक्षाओं की पाठ्-पुस्तकों में चित्र अवश्य हों। धीरे-धीरे ऊँची कक्षाओं में इन चित्रों की कमी होती जाय और उच्च कक्षाओं में इन चित्रों की विशेष आवश्यकता नहीं।

21. जिल्द

पाठ्य-पुस्तकों की जिल्द मजबूत होनी चाहिए। छोटी कक्षाओं में छात्र किताबें बहुत फाड़ते हैं और दुभाग्र्यवश आजकल उन्हीं की जिल्द सबसे कमजोर होती है।

22. आवरण

पाठ्य-पुस्तक का आवरण आकर्षक होना चाहिए। छोटे बालक रंग-बिरंगे चित्रों को बहुत पसन्द करते हैं! अतः उनकी पुस्तकों के आवरणों में विभिन्न चित्र हों तो अच्छा है। ऊँची कक्षाओं की पुस्तकों के आवरण सादे, किन्तु कलात्मक हों।

23. मूल्य

पाठ्य-पुस्तक का मूल्य उचित होना चाहिए जिससे कि छात्र उसे सरलता से खरीद सकें और अभिभावकों पर अधिक भार न पड़े।

उपर्युक्त गुणों में प्रथम पन्द्रह गुण पाठ्य-पुस्तकों के आभ्यन्तरिक गुण हैं। इनमें भी निम्नलिखित प्रकार के गुणों का उल्लेख किया गया है -

(अ) विषय-वस्तु की दृष्टि से आभ्यन्तरिक गुण। क्रम संख्या 1 से 8 तक वर्णित गुण इसी प्रकार हैं।

(ब) भाषा की दृष्टि से आभ्यन्तरिक गुण। क्रम संख्या 9 से 13 तक वर्णित गुण इसी प्रकार हैं।

(स) शैली की दृष्टि से आभ्यन्तारिक गुण। चैदहवें और पन्द्रहवें गुण इसी प्रकार के हैं। पाठ्य-पुस्तकों के बाह्य गुणों में क्रम संख्या 16 से क्रम संख्या 23 तक गुणों की चर्चा की गई है।

4.2.1.5. पाठ्य-पुस्तकों की समीक्षा

पाठ्य-पुस्तकें दो प्रकार की होती हैं –

सूक्ष्म अध्ययनार्थ पुस्तकें

सूक्ष्म अध्ययन वाली पुस्तकों का अध्ययन बड़ी गम्भीरता से किया जाता है। इनका उद्देश्य बालकों के शब्द-भण्डार में बृद्धि करना, उनका भाषा-ज्ञान बढ़ाना, उनके सूक्ति-भण्डार या लोकोक्ति-भण्डार में वृद्धि करना एवं प्रसंगों को भली-भाँति स्पष्ट करना है। इन पुस्तकों को ही साधारणतया पाठ्य-पुस्तकें कहा जाता है। इन्हें गहन अध्ययन की पुस्तकें भी कहते हैं। इनके अध्ययन से छात्रों के ज्ञान में वृद्धि होती है और वे लेखक या कवि के विचारों से परिचय प्राप्त कर लेते हैं।

विस्तृत अध्ययनार्थ पुस्तकें

विस्तृत अध्ययन के लिए सहायक पुस्तकों का प्रयोग दुत पाठ के लिए होता है। इसमें सीखी हुई शब्दावली का ही प्रयोग किया जाता है। इनका उद्देश्य बालकों को द्रुत गति से पढ़ने का अभ्यास कराना है। छात्र शीघ्र गति से पुस्तक को पढ़कर भी उसका अर्थ समझ लें, यही इस पुस्तक का उद्देश्य होता है। शब्दार्थ को स्पष्ट करना एवं व्याख्या करना इन पुस्तकों के शिक्षण का उद्देश्य नहीं होता। कहीं कहीं आवश्यकता पड़ने पर ही शब्दकोष की सहायता लेनी पड़गी।

अपनी प्रगति की जाँच 1

1. पाठ्यपुस्तक के गुण बताइए?
2. पाठ्यपुस्तक के महत्व बताइए?

4.2.2. पाठ्य-सहगामी क्रिया

यह सर्वविदित है कि आज सहगामी क्रियाएँ पाठ्यक्रम के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकार कर ली गई हैं। इसलिए प्रत्येक विषय के शिक्षक का यह प्रयास होना चाहिए कि वह विषयगत जानकारी देते हुए यदा कदा सहगामी क्रियाओं का सहारा लेते हुए विषय को और रूचिपूर्ण बनाये। सहगामी क्रियाओं द्वारा न केवल शैक्षिक, सामाजिक, मानोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की ही पूर्ति नहीं होती वरन् इनके द्वारा नैतिकता का मार्ग प्रदर्शित करते हुए उनमें विविध रूचियों का विकास भी किया जा सकता है।

संस्कृत भाषा एक ऐसा विषय है जिससे अधिकाधिक सहगामी क्रियाएँ सम्बद्ध देखी जाती हैं, क्योंकि सहगामी क्रियाओं की सूची में सबसे अधिक साहित्यिक क्रियाएँ विद्यालयों में सम्पन्न होता हैं। साहित्यिक क्रियाओं के अंतर्गत भाषण, वाद-विवाद, कविता पाठ, अन्त्याक्षरी, नाटक, कवि जयंती, कवि सम्मेलन, कवि-समादर, कहानी प्रतियोगिता, कवि गाष्टी इत्यादि क्रियाएँ आती हैं।

4.2.2.1. पाठ्यसहगामी क्रिया का अर्थ

इन क्रियाओं द्वारा जहाँ एक ओर छात्रों का मनोरंजन करते हुए शिक्षण की यांत्रिकता को दूर करने में सहायता मिलती है, वहीं दूसरी ओर छात्रों के भाषागत ज्ञान एवं कौशल का भी विकास सम्भव होता है। भाषा के बहुत से उद्देश्यों की पूर्ति भी इनके द्वारा सम्भव देखी जाती है। विशेष रूप् से छात्रों को आत्मभिव्यक्ति के अवसर प्राप्त होते हैं। उनमें आत्मविश्वास का संचार होता है तथा शुद्धोच्चारण के साथ कथन कह सकने की कला का निरन्तर परिमार्जन होता है। साहित्यक क्रियाओं का संचालन करते हुए छात्रों की साहित्य के प्रति रुचि भी बढ़ायी जा सकती है।

4.2.2.2. पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्व

01. छात्रों को आत्माभिव्यक्ति अथवा विचाराभिव्यक्ति के अधिकाधिक अवसर प्रदान करते हुए वाचन कला में कुशल बनाना।
02. छात्रों में आत्म प्रकाशन के माध्यम से आत्मविश्वास विकसित करना।
03. छात्रों की साहित्य के प्रति रुचि जागृत करते हुए उनका ज्ञानवर्धन करना।
04. सहगामी क्रियाओं के माध्यम से शिक्षण की यांत्रिकता को समाप्त कर उसमें नयापन लाना।
05. छात्रों में विविध क्रियाओं के माध्यम से सहयोगी भावना, भाईचारे की भावना, दया, साहिष्णुता के भाव आदि मानवीय गुणों का विकास करना।
06. छात्रों को अवकाश काल के सदुपयोग हेतु जानकारी देना।
07. छात्रों में सृजनात्मक कौशल विकसित करते हुए उनमें उचित मूल्यांकन कर सकने की क्षमता का विकास करना।
08. छात्रों में नेतृत्व की क्षमता विकसित करना।
09. छात्रों को समय एवं श्रम के महत्व से परिचित कराना।
10. सहगामी क्रियाओं के माध्यम से छात्रों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना।

4.2.2.3. भाषा से सम्बन्धित पाठ्य सहगामी क्रियाएँ

भाषा से सम्बन्धित पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सांस्कृतिक एंव साहित्यिक दोनों प्रकार की क्रियाओं रखा जाता है। यहाँ पर कुछ ऐसी सहगामी क्रियाओं की चर्चा की जा रही है, जिनका आयोजन हमारे अधिकांश विद्यालयों में किया जाता है -

1. वाद-विवाद

वाद-विवाद प्रतियोगिता का प्रचलन परम्परा से देखा जा सकता है। शिक्षा व्यवस्था में भी वाद-विवाद शिक्षण की एक प्रणाली के रूप में प्रचलन में था। इस प्रतियोगिता में छात्र अभीष्ट विषय के सम्बन्ध में अपने विचार पक्ष और विपक्ष के रूप में व्यक्त करते हैं। वाद-विवाद में उन्हें अपने विचारों को रखने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है किन्तु इसमें प्रत्येक प्रतिभागी छात्रों के लिए बोलने अथवा विचारों को प्रस्तुत करने का एक निश्चित समय निर्धारित रहता है। उस निश्चित निर्धारित समय में ही उसे अपने विचारों को तार्किक रूप में प्रस्तुत करना होता है। प्रतियोगिता के रूप में सम्पन्न कराये जाने के कारण छात्रों में प्रतिस्पर्धा की भावना का विकास होता है, व पूरी निष्ठा, परिश्रम एवं हाव-भाव पूर्ण शैली के साथ अपने वक्तव्य को तैयार करते है। प्रतियोगिता में विजित छात्र को विद्यालय द्वारा पुरस्कृत भी किया जाता है। विद्यालय में यदा-कदा अथवा महीने में एक बार इस प्रतियोगिता का आयोजन अवश्य कराया जाना चाहिए। विशेषकर भाषायी ज्ञानवर्धन की दृष्टि से यह बहुत ही लाभप्रद देखी जाती है।

2. भाषण प्रतियोगिता

इसे भी साहित्यिक प्रतियोगिता के अंतर्गत रखा जाता है। इसका भी प्रचलन प्राचीन समय से देखा जा सकता है। इस प्रतियोगिता का आयोजन भी करते हुए छात्रों का ज्ञानवर्धन किया जा सकता है। शिक्षक को चाहिए कि प्रारम्भिक स्तर से ही छात्रों को भाषण की कला में कुशल बनाये। इसके द्वारा छात्रों को न केवल आत्माभिव्यक्ति के अवसर ही सुलभ होंगे वरन् उनमें आत्मविश्वास भी जागृत होगा। भाषण प्रतियोगिता में सफल प्रतिभागी छात्रों को पुरस्कृत भी किया जाना चाहिए जिससे अन्य छात्र भी उसकी सफलता से प्रेरित हों।

3. अन्त्याक्षरी

अन्त्याक्षरी जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, अन्तिम अक्षर, से प्रारम्भ जाने वाली यह प्रतियोगिता बहुत ही रोचक एवं मनोरंजक मानी जाती है। अन्य प्रतियोगिताओं की तुलना में छात्र इसमें विशेष रुचि लेते हैं। संस्कृत भाषा के ज्ञानवर्धन की दृष्टि से ये अत्यन्त उपयोगी देखी जाती है। इसमें सभी छात्रों को क्रमशः भाग लेने का अवसर भी प्राप्त होता है। यह प्रतियोगिता एक ही कक्षा में छात्रों को दो दलों में विभक्त करके सत्पन्न करायी जाती है। इसके अतिरिक्त दो अलग-अलग कक्षाओं के मध्य, दो विद्यालयों के मध्य, इसी प्रकार आगे बढ़ते हुए राज्य स्तर तक सम्पन्न करायी जा सकती है। यह एक प्रकार की सामूहिक रूप की प्रतियोगिता है। इसमें प्रतिभागी दो दलों में विभक्त हो जाते हैं। प्रथम दल का एक सदस्य किसी पद्य अथवा कविता, दोहा आदि को सुनाता है तथा दूसरे दल के सदस्य को छोड़े गए अन्तिम अक्षर से पुनःप्रारम्भ करते हुए कविता सुनानी होती है, इस प्रकार दोनों दलों के बीच यह क्रम तब तक चलता रहता है जब तक कोई दल अन्तिम अक्षर से कविता बोलने में असमर्थ न हो जाये। विजयी दल को पुरस्कृत किया जाता है।

अन्त्याक्षरी को बहुत ही उत्साहवर्धक प्रतियोगिता के रूप में माना जाता है। इसमें प्रतियोगिता के अंत तक छात्रों में उत्साह बना रहता है। प्रतियोगिता में भाग लेने के उत्साह से छात्र कविताओं, गीतों, श्लोकों एंव दोहो आदि को सरलता से कंठाग्र भी कर लेते हैं। शुद्धच्चोरण के साथ-साथ छात्रों में सुन्दर ढंग से उचित उतार-चढ़ाव के साथ वाचन करने की कला का भी विकास होता है।

4. अनुवाद प्रतियोगिता

प्रतियोगिताओं की श्रृंखला में आयोजित की जाने वाली प्रतियोगिताओं में अनुवाद प्रतियोगिता भी प्रमुख है। अनुवाद का आशय है कि भाषा में व्यक्त विचारों को उसी रूप में दूसरी भाषा की समृद्धि हेतु आवश्यक है कि अन्य भाषाओं की पुस्तकों एवं ग्रंथों का संस्कृत में अनुवाद किया जाये। यह प्रतियोगिता प्राथमिक'' एवं माध्यमिक स्तरों के लिए उचित नहीं है क्योंकि उनका भाषा पर पूर्ण अधिकार नहीं होता, किन्तु उच्च माध्यमिक स्तरों के विद्यार्थियों में इस प्रकार की प्रतियोगिता आयोजित करते हुए अनुवाद कला की क्षमता को प्रोत्साहित किया जा सकता है। इससे छात्रों में अन्य भाषाओं के ज्ञान की वृद्धि के साथ-साथ आलोचनात्मक दृष्टिकोण का विकास भी सम्भव देखा जा सकेगा।

5. कवि जयंती

अवसरानुकूल कवि जयंती या लेखक जयंती का आयोजन करने से छात्रों की साहित्य के प्रति रुचि विकसित की जा सकती है। इसे प्रतियोगिता के रूप में सम्पन्न नहीं किया जाता वरन् किसी विशीष्ट कवि अथवा लेखक की काव्यगत विशेषताओं, रचनाओं को उनकी विशिष्ट तिथिनुसार छात्रों, शिक्षकों एवं आमंत्रित विद्वानों द्वारा स्मरण किया जाता है। भाषा के अतिरिक्त अन्य छात्र भी इससे विशेष लाविन्वित होते हैं। इस दिशा में कुछ कवियों की जयंतियाँ विद्यालय में साहित्यिक क्रियाओं के रूप में आयोजित की जाती हैं, जैसे- कालिदास जयंती, , वाल्मीकी जयंती, संस्कृत दिवस इत्यादि।

6. कवि सम्मेलन

छात्रों को साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न करने एवं उनमें रचनात्मक क्षमता का विकास करने के उद्देश्य से कवि सम्मेलन को उपयोगी पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अंतर्गत माना जाता है। इसमें छात्रों को उत्कृष्ट संस्कृत कवियों अथवा रचनाकारों की रचनाएँ सुनाने का अवसर प्राप्त होता है। इस सहगामी क्रिया का संचालन पूरी तैयारी के साथ एक बड़े आयोजन के रूप में किया जाता है, इसलिए विद्यालयों द्वारा साल में एक बार या दो बार ही सम्पन्न कराया जाना संभव हो पाता है, किन्तु विद्यालय के वार्षिकोत्सव के समय कवि सम्मेलन का आयोजन कराया जा सकता है।

7. साहित्य परिषद्

भाषा के क्षेत्र में साहित्य परिषद् का स्वरूप प्राचीन काल से देखा जा सकता है वैदिक काल की शिक्षा व्यवस्था में 'साहित्य परिषद्' का उल्लेख मिलता है। इस परिषद का प्रमुख उद्देश्य साहित्यिक ज्ञान की वृद्धि करना होता है, अतएव विद्यालयों में इस परिषद् की स्थापना स्थायी रूप अवश्य करायी जानी चाहिए। वे ही छात्र और शिक्षक इसके सदस्य होने चाहिए जो वास्तव में साहित्य में रुचि रखते हैं। इस साहित्य परिषद् की एक कार्यकारिणी समिति भी होनी चाहिए जो वर्ष भर में किये जाने वाले कार्यक्रमों की योजना बनाने तथा उनके क्रियान्वयन को मूर्त रूप दे। आज अन्य विषयों में भी साहित्य परिषद् का रूप देखा जा सकता है जैसे- कला परिषद, संगीत परिषद, नाटय परिषद इत्यादि।

8. विद्यालय पत्रिका

विद्यालय पत्रिका द्वारा भी छात्रों में साहित्यिक रुचि का विकास किया जा सकता है। विद्यालय पत्रिका किसी विद्यालय की क्रियाकलापों की प्रतिबिम्ब स्वरूप होती है। इसमें विद्यालयों के वर्ष भर में संचालित किये जाने वाले कार्यक्रमों के वर्णन के साथ-साथ छात्रों एवं शिक्षकों के लेख, कविता, संस्मरण, चुटकुलों, कहानियाँ, प्रहसन आदि भी प्रकाशित कियो जाते हैं। छात्रों की सुजनात्मक कुशलता का अनुमान इसके आधार पर लगाया

जा सकता है। इसके माध्यम से उनकी प्रतिभा को निखरने का अवसर प्राप्त होता है। कई विद्यालयों में प्रकाशित उत्कृष्ट रचनाओं को पुरस्कृत किया जाता है, जिससे छात्र प्रोत्साहित होते है। आज प्रत्येक आदर्श विद्यालय से यह अपेक्षा की जाती है कि वे विद्यालय पत्रिका के माध्यम से न केवल अपने विद्यालय के गौरव को ही बढ़ाये वरन् संस्कृत भाषा साहित्य के संरक्षण, संवर्धन में भी योगदान दे।

10. सरस्वती यात्राएँ

वर्ष में एक बार सरस्वती यात्राओं का अयोजन करते हुए भी छात्रों की साहित्य के प्रति रुचि बढ़ायी जा सकती है। प्रत्येक विद्यालय में पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अंतर्गत इसका विशेष महत्व माना जाता है। ये यात्राएँ विद्यालयों द्वारा ही संचालित की जाती है। ये छात्रों के लिए मात्र मनोरंजनप्रद ही नही होती वरन् इनके माध्यम से छात्रों में अनेक गुणों का विकास भी देखा जाता है, जैसे - सृजनात्मकता, मिलजुल कर कार्य करने की भावना, उत्तरदायित्व की भावना इत्यादि।

उपरोक्त पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य ऐसी क्रियाएँ है जिनके लिए किसी विशेष आयोजन की आवश्यकता नहीं पड़ती तथा महीने में एक या दो बार अथवा सप्ताह के अन्तिम दिन शनिवार को सम्पन्न करायी जा सकती हैं- जैसे लघु नाटक का मंचन, भाषा से सम्बन्धित पोस्टर अथवा चार्ट प्रतियोगिता, कहानी प्रतियोगिता, कविता पाठ, फ्लैश कार्ड तैयार करने से सम्बन्धित प्रतियोगिता, मूक अभिनय इत्यादि।

अपनी प्रगति की जाँच 1

1. पाठ्यसहगामी क्रियाओं का महत्व बताइए ?
2. पाठ्यसहगामी क्रिया का अर्थ बताइए ?

4.2.3. दृश्य-श्रव्य उपरकण

जिन सामग्रियों के प्रयोग से छात्र सुनकर मन में शब्द-चित्र का निर्माण करता है और दुरूह को समझता है, उन उपकरणों को दृश्य-श्रव्य उपरकण कहा जाता है।

4.2.3.1. श्रव्यदृश्य साधनों का तात्पर्य

भाषा शिक्षण के समय कुछ कठिन शब्दों का स्पष्टीकरण करने के लिए मौखिक उदाहरणों की सहायता ली जाती है। मौखिक रूप से शब्द-चित्र प्रस्तुत करने वाले साधनों को मौखिक उदाहरण कहा जाता है।

कुछ साधन दृश्य होते हैं। इन साधनों को देखकर शब्द, अर्थ या भाव को समझा जाता है। श्रव्य उपकरणों में श्रवणेन्द्रिय का प्रयोग है तो दृश्य उपकरणों को साक्षात् चक्षुओं से देखा जाता है। कुछ उपकरण ऐसे होते हैं, जो

श्रव्य-दृश्य दोनों होते हैं। ऐसे उपकरण बहुत कम है। श्यामपट, चार्ट पोस्टर आदि दृश्य उपकरण हैं। रेडियो, ग्रामोफोन आदि श्रव्य उपकरण है। टेलीविजन, अभिनय आदि कुछ श्रव्य-दृश्य दोनों है। किन्तु श्रव्य-दृश्य उपकरण नाम व्यापक है और केवल श्रव्य या केवल दृश्य को भी सामान्यत श्रव्य-दृश्य उपकरण कह दिया जाता है। अतः भाषा शिक्षण में इनके प्रयोग की चर्चा करते समय सूक्ष्म भेद को ध्यान में नहीं रखा जायगा।

4.2.3.2. भाषा में श्रव्य-दृश्य साधनें

01. चित्र

पाठ को आकर्षक व रोचक बनाने के लिए अध्यापक चित्र का प्रयोग कर सकता है। रेखाओं और रंगों का यह वह संयोग जो अपनी मूक भाषा में किसी तथ्य, भाव योजना की अभिव्यक्ति करे, चित्र कहलाता है। यह आँखों को सौन्दर्य प्रदान करता है। चित्र में वस्तुओं का चित्रण रहता है। कला का प्रदर्शन, मनोरंजन, भावाभिव्यक्ति, सौन्दर्याभिव्यक्ति, मूल, वर्णन सूचना, ज्ञान, शिक्षा, धार्मिक भावना, अध्यात्मवाद, मत, प्रचार आदि इसके अनेक उद्देश्य हैं। साधारण तस्वीरों और शैक्षिक चित्रों में अन्तर होता है। शैक्षिक चित्र केवल मनोरंजन कौतूहल, आनन्द या सौन्दर्य के लिए न होकर अनुभव, भाव, तथ्य, ज्ञान एवं शिक्षा प्रदान करने के लिए होते हैं।

पाठ्यपुस्तकों में भी चित्र होते हैं, किंतु वे चित्र छोटे होते हैं। शिक्षण के लिए बाहर से बड़े चित्र ले जाने पड़ते हैं। ये सस्ते एवं सुलभ होने चाहिए। महापुरुषों के चित्र, स्थान के चित्र या युद्ध-वर्णन अथवा सभा-सम्मेलनों के चित्र भाषा-शिक्षण में सरलता से प्रयुक्त हो सकते हैं। एक कालांश में अनेक चित्रों की अपेक्षा एक या दो चित्र ही प्रयुक्त करने चाहिए। प्रत्येक चित्र सोद्देश्य हो और उन पर आवश्यक प्रश्न किये जाने चाहिए। चित्र को ऐसी जगह टाँगना चाहिए, जहाँ से वह सभी बालकों को सरलता से दिखाई पड़े। चित्र स्पष्ट होना चाहिए। इनमें कलात्मकता, स्पष्टता, प्रभावीता, शुद्धता, विश्वसनीयता, सत्यता एवं पूर्णता होनी चाहिए। इसे मनोरंजक, आकर्षक, उत्तेजक एवं व्यवहारिक होना चाहिए। इसका आकार इतना बड़ा हो कि पूरी कक्षा देख सके।

02. रेखाचित्र

वस्तु प्रतिमूर्ति या किसी अन्य साधन के अभाव में अध्यापक कभी-कभी रेखाचित्र का सहारा लेता हैं। रेखाचित्र उध्यापक द्वारा कुछ रेखाओं के माध्यम से भाव की मूक अभिव्यक्ति है। श्यामपट पर चॉक के सहारे अध्यापक रेखाचित्र खींचकर पाठ को रोचक बना देता है। विभिन्न रेखाओं, कोणों घुमावों आदि को श्यामपट पर पढ़ाते समय बनाना स्वाभाविक भी है और सरल भी है। मण्डलाकार, उच्चासन आदि शब्दों का स्पष्टीकरण रेखाचित्र द्वारा किया जा सकता है।

03. मानचित्र

मानचित्र का सर्वाधिक प्रयोग इतिहास-भूगोल की कक्षाओं में होता है, किंतु भाषा के पाठों में कुछ इतिहासिक या भौगोलिक तथ्यों व प्रसंगों को स्पष्ट करने के लिए मानचित्र का प्रयोग किया जा सकता है। नालन्दा, पुरी, विक्रमशिला, हिमगिरि, गोदावरी, केरल, नागालैण्ड जैसे पाठों को मानचित्र की सहायता से पढ़ाना सरल हो जाता है।

04. खादी बोर्ड

एक बड़े तख्ते पर फलालेन या खादी कपड़ा या ऊनी कपड़ा तानकर चिपका दिया जाता है और इस बोर्ड को फलालेन बोर्ड या खादी बोर्ड कहते है। इसमें चॉक से कुछ लिखा नहीं जाता। वरन् कुछ चित्रों या चिन्हों की कटिंग चिपकाई जाती है। पाठ से सम्बन्धित चित्रों को विभिन्न पोस्टरों, पुस्तकों, पत्रिकाओं या समाचार-पत्रों से काट लिया जाता है और उनके पीछे रेगमाल कागज लगा दिया जाता है। अब इन चित्रों को खादी बोर्ड पर चिपकाने पर ये चिपक जाते है और आवश्यकतानुसार निकाले जा सकते है। इन चित्रों या आकृतियों के पीछे अपनी जानकारी के लिए क्रम संख्या लिख दी जाती है जिससे कहानी का विकास करने में चित्रों को क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत किया जा सके। प्रारम्भिक स्तर पर वर्णमाला सिखाने में, संयुक्ताक्षरों का ज्ञान कराने एवं माध्यमिक स्तर पर निबन्ध या कहानी का विकास करने में खादी बोर्ड का प्रयोग किया जा सकता है।

05. लिंग्वाफोन तथा ग्रामोफोन

श्रव्य उपकरणों में ग्रामोफोन का अपना महत्व है। ये उपकरण रिकार्डो की सहायता से बालकों का मनोरंजन करते हैं और शिक्षा भी देते हैं। मसाले के बने गोल तवे पर रेखाओं के रूप में ध्वनि भर ली जाती है और तब लिंग्वाफोन की सहायता से पाठ सुना दिए जाते हैं। ग्रामोफोन की सहायता से कविता, एकांकी संवाद आदि की शिक्षा रोचक ढंग से दी जा सकती है। कविता का वाचन वार्तालाप, संवाद एवं भाषण की शैलियों का ज्ञान इसके द्वारा सरलता से हो सकता है। ग्रामोफोन के रिकार्ड स्थायी होते हैं। अब बने-बनाये रिकार्ड बाजार से प्राप्त हो सकते हैं। सस्वर वाचन, शब्द-उच्चारण, आदर्श वाचन आदि का अभ्यास इनके द्वारा सरलता से किया जा सकता है।

06. रेडियो

रेडियो का प्रयोग अब भारतीय परिवार में भी बढ़ता जा रहा है। शिक्षालयों में यह साधन यदि सुलभ है तो इसके कार्यक्रमों की पहले से जानकारी प्राप्त करके भाषा-शिक्षण में इसका उपयोग किया जा सकता है। भारत के प्रत्येक विद्यालय में सभी विद्वान या भाषाविद् नहीं जा सकते। भाषा-विशेषज्ञ आकाशवाणी द्वारा अपने वक्तव्य

प्रसारित करते रहते है। इन वार्ताओं को सुनकर छात्र अपना साहित्यिक ज्ञान बढ़ा सकते है। ग्रामीण विद्यालयों में अभी भी यह साधन सुलभ नहीं है। रेडियो-कार्यक्रमों को और अधिक शैक्षिक बनाने की आवश्यकता है।

07. टेपरिकार्डर

यह ऐसा यन्त्र है जो बिजली या बैटरी की सहायता से टेप पर पहले से संग्रहीत ध्वनि को प्रसारित करता है। ग्रामोफोन के रिकार्ड स्थायी होते है, किन्तु टेपरिकार्डर के टेप अस्थायी होते है। ये तार या फीते वाले रिकार्ड होते है और इन्हें जब चाहें तब समाप्त कर इन पर दूसरे रिकार्ड भर लें। वक्तव्य, भाषण, कविता, गीत, वार्तालाप आदि को टेप करके विद्वानों के स्वर हम बार-बार सुन सकते हैं। यह रेडियो से कहीं अधिक प्रभावी एवं महत्वपूर्ण साधन है क्योंकि इसमें समय का बन्धन नहीं होता।

08. अभिनय

विद्यालय में विशष रूप से कभी-कभी नाटकों का आयोजन होता है। वार्षिकोत्सव, सम्मेलन या किसी विशेष दिन के आयोजन में आगन्तुकों के मनोरंजनार्थ नाटक अभिनीत किये जाते हैं। संस्कृत-शिक्षण की दृष्टि से अभिनय महत्वपूर्ण है। अभिनय को देखकर एवं पात्रों के मुख से स्पष्ट एवं उचित आरोहावरोह युक्त वाणी को सुनकर छात्र भाषा का उचित प्रयोग सीखते हैं। अभिनय श्रव्य-दृश्य साधन है जिसे देखा और सुना जाता है। अभिनय के माध्यम से बालक को स्वाभाविक गति से बोलने की आदत पड़ जाती है। वह शब्दों एवं वाक्यों को सजीव ढंग से बोलना सीख जाता है।

09. चलचित्र

चलचित्र आज मनोरंजन का सर्वप्रथम साधन बन गया है। पश्चिमी देशों में पाठ्य-वस्तु को स्पष्ट करने के लिए चलचित्रों का खूब प्रयोग होने लगा है। साहित्य में वर्णित विभिन्न प्रकार के काल्पनिक दृश्यों को वर्णन द्वारा स्पष्ट किया जाता है, किन्तु इन दृश्य को फिल्मों में फोटोग्राफी की कला द्वारा सरलता से प्रदर्शित किया जा सकता है। नवीन खोजों के परिणामस्वरूप आज फोटोग्राफी की कला में बहुत विकास हो गया है और सूक्ष्म अंगों का दिखाया जाना सम्भव हो गया है।

आज सिनेमा के प्रति लोगों की अच्छी धारणा नहीं है, क्योंकि भारत में प्रचलित फिल्में बड़ी घटिया किस्म की हैं, किन्तु इनमें सुधार किया जा सकता है और महान पुरुषों के जीवन से चुनकर अच्छे साधन प्रस्तुत किये जा सकते है। भारत में शैक्षिक चलचित्र बहुत कम बनते हैं। दूसरी बात यह भी है कि यह साधन व्ययसाध्य है। कभी-कभी इस साधन का सुलभ होना कठिन है। विद्यालय में प्रोजेक्टर की व्यवस्था नहीं होती और कोई अच्छा अँधेरा कमरा या हॉल नहीं होता। अतः यह भाषा-शिक्षण में प्रयुक्त नहीं किया जा सकता।

10. टेलीविजन

रेडियो का अत्यन्त विकसित रूप टेलीविजन है जिसमें ध्वनि के साथ-साथ चित्र भी आते हैं। टेलीविजन केन्द्र में अध्यापक भाषा की शिक्षा देकर दूर-दूर तक बैठे श्रोता दर्शकों को भाषा सिखा सकता है। यह श्रव्य-दृश्य साधन है क्योंकि इसमें हम बोलने वाले को देख भी सकते है। कान और आँख दोनों इन्द्रियों के प्रयोग के कारण यह साधन अधिक प्रभावशाली है। रेडियो सेट के साथ एक छोटे आकार का रजतपट लगा रहता है जिसमें सहस्त्रों किलोमीटर दूरी पर बैठे हुए व्यक्ति को कविता सुनाते हुए, भाषण देते हुए, वार्तालाप करते हुए देखा जा सकता है। रेडियो और चलचित्र दोनों के लाभ इससे मिल सकते हैं।

क्रम संख्या एक से दस तक के साधन केवल दृश्य साधन हैं। क्रम संख्या 11,12 और 13 के साधन केवल श्रव्य साधन हैं और बाद के तीन साधन श्रव्य-दृश्य दोनों हैं।

अपनी प्रगति की जाँच 1

1 भाषा शिक्षण में श्रव्य-दृश्य साधनें स्पष्ट करें ?

2 श्रव्य-दृश्य साधनों का तात्पर्य क्या है बताइए ?

4.2.4. संस्कृत भाषा शिक्षक

शिक्षा जीवन का एक महत्वगपूर्ण अंग है और शिक्षण की एक महत्व पूर्ण प्रक्रिया। इस रंग बिरंगी दुनियों में फूल भी हैं और कांटे भी अवसाद भी है और हंसी के साथ रुदन भी। इन विषम परिस्थितियों में बालक समायोजित होकर अधिक से अधिक सुखपूर्वक रह सके, इसके लिए हमें शिक्षा की आवश्यकता पड़ती हैं। शिक्षा के तीन अंग हैं- शिक्षक शिक्षार्थी और पाठ्यक्रम। शिक्षा देने का महत्वपूर्ण कार्य शिक्षक अर्थात् अध्यापक करता है। शिक्षार्थी और पाठ्यक्रम को जोड़ने वाली कड़ी अध्यापक ही हैं। इसके बिना सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया अवरुद्ध एवं निष्क्रिय होती है। अध्यापक ही बालकों के व्येक्तित्व विकास और उनके भविष्य निर्माण में सहायक होता है। गुणों की दृष्टि से अध्यापक को निपुण, कुशल तथा ज्ञान-सम्पन्न होना चाहिए जिससे छात्रों पर अच्छा प्रभाव पड़े। इस प्रकार अध्यापक को गुणयुक्त होने के साथ ही उत्तर दायित्व पूर्ण भी होना आवश्यक है:

4.2.4.1. संस्कृात भाषा शिक्षक के सामान्य गुण

वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक वैज्ञानिक युग में सर्वत्र भ्रष्टाचार व स्वार्थपरता का साम्राज्य चारों और फैला हुआ है, ऐसी परिस्थिति में शिक्षकों का उत्तरदायित्व इस दृष्टि से भी वढ गया है कि वे देश के भावी नागरिकों में नैतिक मूल्यों का विकास करें तथा देश-प्रेम बंधुत्व की भावना को उत्पन्न करें। संस्कृत अध्यापक में निम्नलिखित सामान्य् गुण अपेक्षित हैं:

01. उच्च चरित्र एवं दृढ़ संकल्पना

02. उत्तम स्वास्थ्य।
03. नेतृत्व की क्षमता
04. हॅसमुख व्यवक्तित्व
05. मित्रता एवं सहानुभूति पूर्ण व्यवहार
06. आकर्षक व्यक्तित्व
07. शिक्षकोचित वेशभूषा
08. मधुरवाणी
09. संवेगात्मक सन्तुलन
10. कर्तव्यनिष्ठा

4.2.4.2. संस्कृत भाषा शिक्षक के विशिष्टि गुण

संस्कृत अध्यापक को आज भी अपनी वैदिक कालीन परम्प्रागत प्रतिष्ठा को बनाये रखना है। उसे भारतीय संस्कृति की रक्षा करने में तथा शास्वत मूल्यों का विकास करने में अपना योगदान देना चाहिए। इसके लिए संस्कृत शिक्षक से विशेष अपेक्षाएँ है। संस्कृत अध्यापक में अध्यापक के सामान्य गुण होने ही चाहिए।

01. विद्वता

संस्कृपत अध्यापक को संस्कृत का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। पूर्ण ज्ञान का अर्थ है कि उसे संस्कृत शब्दावली, शब्दों की व्यूत्पत्ति, मूल शब्द, उपसर्ग, प्रत्यय अर्थात् उसे पर्याप्त व्याकरण रचना का ज्ञान होना चाहिए। उसकी मौखिक और लिखित अभिव्यक्त निर्दोष हो। संस्कृत साहित्य की विविधता युक्त ज्ञान हेतु उसका अध्ययन गहन हो।

02. स्वाध्यायशीलता

शिक्षक को आजीवन विद्यार्थी बना रहना पड़ता है। किसी भी ज्ञान में पारंगत होने के लिए साधना करनी पड़ती है और संस्कृत अध्यापक के लिए, इसकी नितान्त आवश्यकता है। कुछ लोगों द्ववारा संस्कृत को पुरानी भाषा या मृत भाषा कहकर उसके अध्यापकों के ज्ञान को पुराना या रुढिवादी बता दिया जाता है किन्तु यह धारणा उचित नहीं है। संस्कृत अध्यापक को चाहिए कि वह अपने ज्ञान को समय की गति के साथ परिवर्तित भी करें जो कि उसमें स्वध्यायशीलता होने से ही संभव हो सकेगा।

03. साहित्यिक एवं शैक्षणिक क्रियाओं में अभिरुचि

केवल पाठ्यक्रम में प्रयुक्त पुस्तकीय ज्ञान से ही एक उत्तम भाषाज्ञ नही हो पाएगा। अतः वाद-विवाद, भाषण, अन्त्याक्षरी इत्यादि साहित्यिक एवं शैक्षणिक क्रियाओं का अभ्यास करवाना होगा। संस्कृत प्रतियोगिताओं के आयोजन एवं उसमें सहभागीता लेने हेतु भी छात्रों को अभिप्रेरित करना होगा किन्तु यह सब तभी संभव होगा जब अध्यापक में इन सबमें विशेष रुचि हो।

04. शुद्धोचारण

भाषा अध्यापक का सर्वश्रेष्ठ गुण उसका शुद्धोचारण है। यदि उसका उच्चारण शुद्ध होगा तो संपर्क में आने वाले छात्र का उच्चाहरण स्वत: ही शुद्ध होगा। संस्कृत एक संश्लिष्ट भाषा है। इसमें शब्दों के अशुद्ध उच्चारण से अर्थ अनर्थ हो जाता है। मन्त्रों के अशुद्धोच्चारण से देवता रुष्ट हो जाते हैं। सामान्य उच्चारण दोष से सकल (सम्पूर्ण) का शकल (टुकडा) और स्वजन (आत्मीय) का श्वजन (कुत्ता) बन जाता है।

05. शुद्ध व सुन्दरर लेख

संस्कृत शिक्षक का लेख सुन्दर, स्पपष्टा, सुडौल व आकर्षक होने के साथ-साथ शुद्ध भी होना चाहिए। शिक्षक द्वारा की गई विसर्ग, अनुस्वार, हलन्त तथा विभक्ति के प्रयोग सम्बन्धी अशुद्धियों से छात्रों का त्रुटिपूर्ण अभ्यास धीर-धीर- सुदृढ हो जाता है। बाद में इसे दूर करना एक जटिल समस्या बन जाती है। अत: शिक्षक को इस और सचेत रहना चाहिए।

06. संस्कृत भाषा में रुचि

संस्कृत शिक्षक की संस्कृत भाषा के साहित्य को पढ़ने तथा पढ़ाने की रुचि होनी चाहिए ताकि वह संस्कृत शब्दावली, शब्द के निर्माण की विधियाँ, भाषा में अशुद्ध लेखन और उच्चारण के कारणों को समझ सके तथा उन्हें दूर करने के उपाय आदि में रुचि ले सके।

07. वैज्ञानिक दृष्टिकोण

संस्कृत शिक्षक का चिन्तन वैज्ञानिक होना चाहिए। संस्कृत भाषा का व्याकरण क्रमबद्ध और सूत्रबद्ध होने के कारण यह भाषा संगणक पर सर्वाधिक सफल भाषा सिद्ध हुई है। संस्कृत शिक्षक कुछ नवचिन्तन कर संस्कृत भाषा में सॉफ्टवेयर (मृदु उपागम) तैयार कर सकते है। नवीन शोधकार्य से संस्कृात के प्रयोग स्तर को उन्नत किया जा सकता है।

08. कुशल मौखिक अभिव्यतक्ति

संस्कृत शिक्षक को संस्कृत भाषा में भाषण देने में निपुण होना चाहिए। स्वयं प्रभावशाली वक्ता होने पर संस्कृत शिक्षक अपने छात्रों को भी इस कला में निपुण बना सकता है।

09. नीरक्षीर विवेकी

संस्कृत शिक्षक को मूल्यांकन के नवीन विधियों से परिचित होना चाहिए जिससे वह अपने शिक्षण का तथा छात्रों की उपलब्धियों का मूल्यांकन सही व निष्प क्ष रूप से करके उसमें अपेक्षित सुधार कर सकें।

10. प्रशिक्षण प्राप्त तथा अनुभवी

विधिवत् प्रशिक्षण प्राप्त करके संस्कृत अध्यापक को अपने नित्य नवीन अनुभवों के आधार पर छात्रों को संस्कृत व्या करण, अनुवाद एवं रचना कार्य का अभ्यास करवाना चाहिए। ये कार्य एक प्रशिक्षित अनुभवी अध्यापक ही कुशलतापूर्वक करवा सकता है। छात्रों को केवल पाठों का अनुवाद करवा देना ही संस्कृत का वास्ताविक शिक्षण नहीं है।

11. अन्य विषयों का ज्ञाता

संस्कृत शिक्षक को संस्कृत के अतिरिक्त अग्रेजी तथा अन्य भारतीय भाषाएँ, अन्य विद्यालयिय विषय यथा-सामाजिक अध्ययन, सामान्य विज्ञान, सामान्य गणित आदि का भी पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए, जिससे वह अन्य विषयों से तुलना करते हुए छात्रों के संस्कृत भाषा का ज्ञान प्रदान कर उनके ज्ञान में वृद्धि कर सके।

12. सृजनात्मपकता

संस्कृत शिक्षक में संस्कृत भाषा में साहित्य सृजन की क्षमता भी होनी चाहिए। इससे साहित्य के संवर्धन में योगदान देने के साथ ही छात्रों में भी सृजनात्मक प्रवृत्ति का विकास किया जा सकता है।

13. कुशल अभिनेता

संस्कृत शिक्षक को सुन्दर वाणी में लय, यति, गति, आरोह, अवरोह सहित श्लोकों का पाठ करने की कला आनी चाहिए। साथ ही उसमें अभिनय कला भी होनी चाहिए ताकि उसकी मुखमुद्रा व हावभाव से छात्रों को विषय समझने में सुविधा हो सके तथा संस्कृत के प्रति रुचि उत्पुन्न हो सके।

14. बदलते परिवेश से सामंजस्य हेतु उदारवादी दृष्टिकोण

आज का संस्कृत अध्यानपक केवल पुराने ज्ञान से ही संतुष्ट नहीं होना चाहिए, उसे बदलते परिवेश से सामंजस्य-स्थापित करते हुए भी चलना होगा, अत: नवीन शैक्षिक तकनीकों एवं सहायक सामग्री का प्रयोग कर पाठों को और सुविधा रोचक ढंग से पढ़ाने में सक्षम होना होगा। आजकी भौतिकवादी उपलब्धियों और कमियों को दिखाते हुए उसे प्राचीन संस्कृति की महत्ता पुन: स्थापित करने का प्रयास करना होगा, जिससे छात्रों से अपना प्राचीन भाषा एवं संस्कृत के प्रति सम्मान उत्पन्न हो सके।

आज के संस्कृंत अध्यापक का दायित्व बढ़ गया है क्योंकि उसे प्राचीन उदान्तक भारतीय संस्कृति से भी जुड़े रहना है और वर्तमान भौतिकवादी संस्कृति से जूझते हुए मानव की रक्षा भी करनी है, साथ ही उसकी उपलब्धियों का लाभ भी उठाना है। प्राचीन व आधुनिक संस्कृति में सामंजस्य भी बनाना है।

अपनी प्रगति की जाँच 1

1. संस्कृत भाषा शिक्षक के सामान्य गुणों को वर्णन करें ?
2. संस्कृत भाषा शिक्षण को रोचक बनेने के लिए विशिष्ट गुणों को लिखें ?

4.3. सारांश

छात्र कक्षा में या कक्षा से बाहर, विद्यालय की सीमा के अन्तर्गत किसी स्थल पर जो कुछ अनुभव करता है वह सब पाठयक्रम है। में विद्यार्थिओं की रूचि एवं योग्यता के अनुसार पाठ्यक्रम को विभिन्न भागो में बंटा जा सकता है। पाठ्य-पुस्तकों की आवश्यकता साधन रूप में ही है, साध्य रूप में नही। गृह-कार्य देने, कल्पना-शक्ति का विकास करने आदि विभिन्न कार्यों को पाठ्यपुस्तक से साधित कर सकते है। एक अच्छी पाठ्य-पुस्तको की कुछ विशेषताएँ होती हैं, वे ही विशेषताएँ उसके गुण का निर्धारण करती है। वे गुण आभ्यन्तरिक और बाह्य के रूप में दो भाग कर सकते है । आभ्यन्तरिक गुण पुस्तक के वे भीतरी गुण है जो उसकी भाषा, शैली, पाठ्य-विषय आदि की दृष्टि से होते है। बाह्य गुणों में पुस्तक का आवरण, मुद्रण, साज-सज्या आदि होते है। संस्कृत भाषा एक ऐसा विषय है जिससे अधिकाधिक सहगामी क्रियाओं का सम्बद्ध देखी जाती हैं, क्योंकि सहगामी क्रियाओं की सूची में सबसे अधिक साहित्यिक क्रियाएँ विद्यालयों में सम्पन्न होती हैं। साहित्यिक क्रियाओं के अंतर्गत भाषण, वाद-विवाद, कविता पाठ, अन्त्याक्षरी, नाटक, कवि जयंती, कवि सम्मेलन, कवि-समादर, कहानी प्रतियोगिता, कवि गोष्टी इत्यादि क्रियाएँ आती हैं। भाषा शिक्षण में शिक्षक की भुमिका महत्वपूर्ण है। अतः शिक्षक में भी भाषा के अनुसार खुवियाँ होनो चाहिए। संस्कत भाषा की विशिष्टता को ध्यान में रखते हुए विद्वता, साहित्यिक एवं शैक्षणिक क्रियाओं में अभिरुचि, शुद्धोचारण, शुद्ध व सुन्दरर लेख, संस्कृत भाषा में रुचि, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, अन्य विषयों का ज्ञाता, सृजनात्मपकता, कुशल अभिनेता आदि गुणों को संस्कृत भाणा शिक्षक का विशेष गुण माना जाता है।

4.4. अपनी प्रगती की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

अपनी प्रगति की जाँच –
उत्तर -अध्याय 4.2 देखे |

4.5. शब्दावली

पाठ्यपुस्तक – पाठ्यपुस्तक ज्ञान,अनुभवों, भावनाओं, विचारों तथा प्रवृत्तियों व मूल्यों की संचय का साधन है। **- हैरोलिकर**

अभिनय – अभिनय का अर्थ अतीत या वर्तमान की किसी स्थिति को क्रिया और जीवन देना है। इसका प्रयोग जिस में किया जाता है ,उस को नाट्य रूपांतरण या भूमिका अभिनय कहा जाता है।"

पाठ्यसहगामी गतिविधियां –"छात्रों में शास्त्रीय दृष्टिकोण विकसीत करने के लिए विभिन्न गतिविधियों का आयोजन किया जाता है, इस गतिविधियोंकों पाठ्यसहगामी गतिविधियाँ कहते है।"

4.6. कार्य आवंटन

विभिन्न पाठ्य सहगामी गतिविधियों की छात्रों के विकास में भूमिका स्पष्ट कीजिये ।
संस्कृत शिक्षकों के विशिष्ट गुणों को बताइए।

4.7. क्रियाएं

संस्कृत शिक्षण मेंदृश्य-श्रव्य उपकरणों की उपयोगिता का वर्णन कीजिये।
विभिन्न पाठ्य सहगामी गतिविधियों की संस्कृत शिक्षण में भूमिका बताईये।

4.8. प्रकरण अध्ययन (केस स्टडी)

पाठ्यपुस्तक एवं पूरक-पुस्तकों का छात्रों के सर्वांगीण विकास में भूमिका स्पष्ट कीजिये।
संस्कृत शिक्षक के गुणों को समीक्षा कीजिए।

4.9. संदर्भ पुस्तकें

01. सक्सेना, राधारानी, (2013),"नवाचारी शिक्षण पद्धतियाँ", जयपुर, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी।
02. गुप्त, मनोरमा – भाषा अधिगम, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा
03. गुनानंद -हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास, विनोद पुस्तक मंदिर , आगरा
04. द्विवेदी, देवीशंकर – भाषा और भाषिकी, भाषा-विज्ञान-विभाग, सागर वि.वि , सागर
05. पांडेय, रामाशकल –हिन्दी शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा

06. चतुर्वेदी, शिखा – हिन्दी शिक्षण, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ
07. शर्मा, देवेन्द्रनाथ – भाषा विज्ञानं की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
08. तिवारी, भोलानाथ, भाषा विज्ञान, चौखम्बा प्रकाशन, वारणासी
09. शर्मा, लक्ष्मनाराय़ण, सिंह फतेह, संस्कृतशिक्षणं नविन प्रविधयः, आदित्य प्रकाशन, जयपुर
10. मित्तल,संतोष,संस्कृत शिक्षणम, नवचेतना पब्लिकेशनस्,जयपुर
11. सफाया, रघुनाथ,संस्कृत शिक्षण, हरयाणा ग्रन्थ अकादमी
12. पाण्डेय, रामशकल, संस्कृत शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
13. विश्वासः,कौशल बोधिनि, संस्कृत भारती, दिल्ली
14. शर्मा, मुरलीधर, संस्कृत शिक्षण समस्या, रा.सं.सं विद्यापीठ, तिरूपति
15. सिंह, कर्ण, संस्कृत शिक्षण विधि,एच्. पि.भार्गव बुक सेंटर, आगरा

इकाई – 5
मूल्यांकन पद्धति

इकाई की रूपरेखा

5.0. इकाई परिचय
5.1. शिक्षण के उद्देश्य
5.2. विषय विवेचन
5.2.1. मूल्यांकन का संप्रत्यय
5.2.1.1. मूल्यांकन का अर्थ
5.2.1.2. मूल्यांकन की परिभाषा
5.2.1.3. मूल्यांकन के उद्देश्य
5.2.1.4. मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपान
5.2.1.5. मूल्यांकन का स्वरूप
5.2.2. मूल्यांकन के प्रकार
5.2.2.1. लिखित परीक्षा
5.2.2.2. मौखिक परीक्षा
5.2.2.3. उत्तम परीक्षण के गुण
5.2.2.4. मूल्यांकन में ध्यान देने योग्य बातें
5.3. सारांश
5.4. अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर
5.5. शब्दावली
5.6. कार्य आवंटन
5.7. क्रियाएं
5.8. प्रकरण अध्ययन
5.9. संदर्भ पुस्तकें

5.0. इकाई परिचय

शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षण उद्देश्यों की पूर्ति से ही यश प्राप्त होता है। अत: अध्यापन कार्य से पहले उद्देश्यों का निर्धारण होना महत्वपूर्ण हैं एवं उस निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अध्यपन अनुभवों की योजना निर्माण होना अनिवार्य है। तत्पश्चापत् उद्देश्यों की पूर्ति किस सीमा तक हुई, यह जानने के लिए मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। अतः इस अध्याय में मूल्यांकन प्रक्रिया को समझने केलिए मूल्यांकन का अर्थ, परिभाषा,

उद्देश्य. सोपान एवं स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। संस्कृत भाषा शिक्षण में मूल्यांकन की प्रायोगीकता को ध्यान में रखते हुए लिखित तथा मौखिक परीक्षा प्रकार का वर्णन किया गया है, साथ साथ परीक्षा की गुणवत्ता की दृष्टि से उत्तम परीक्षण के गुण व मूल्यांकन में ध्यान देने योग्य बातों का वर्णन किया गया है।

5.1. शिक्षण के उद्देश्य

इस इकाई के पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित में सक्षम होंगे :

1. मूल्यांकन का ज्ञान प्राप्त करना।
2. उत्तम परीक्षण के गुणों का ज्ञान प्राप्त करना।
3. मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपानों का ज्ञान प्राप्त करना।
4. मूल्यांकन प्रक्रिया के सावधानीयाँ का ज्ञान प्राप्त करना।
5. मूल्यांकन के उद्देश्यों को समझना
6. संस्कृत शिक्षण में मूल्यांकन का महत्व का ज्ञान प्राप्त करना।

5.2. विषय विवेचन

5.2.1. मूल्यांकन का संप्रत्यय

शिक्षा के समान मूल्यांकन की प्रक्रिया भी निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है तथा शिक्षा का अपरिहार्य अंग है। मूल्यांकन का अर्थ है 'आँकना' अथवा 'आकलन' करना। मूल्यांकन किसी भी कार्य का किया जा सकता है, किन्तु शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन का अभिप्राय है प्रगति का आकलन करना 'प्रगति' से यहाँ आशय छात्र की उत्तीर्ण, अनुत्तीर्ण होने मात्र से नहीं, वरन् छात्र के सम्पूर्ण व्यवहार परिवर्तन, शिक्षण विधि एवं पाठ्यक्रम के औचित्य से है।

5.2.1.1. मूल्यांकन का अर्थ

'मूल्यांकन' शब्द बहुत व्यापक है, इसका सम्बन्ध केवल परीक्षा से नहीं है, वरन् इसके अंतगर्त मापन और परीक्षा दोनों सम्मिलित हैं। दोंनों के समावेश्या के पश्चात् भी इसे मापन और परीक्षा का समानार्थी नहीं कहा जा सकता। परीक्षण और मापन के पश्चात् ही मूल्यांकन समग्र रूप से किया जाता है। परीक्षा के द्वारा छात्रों की अभिरुचि, मनोवृत्ति, रुचि एवं व्यक्तित्व सम्बन्धी जाँच की जाती है एवं मापन में छात्रों की उपलब्धि को संख्यात्मक अथवा अंकों के माध्यम से मापा जाता है। किन्तु मूल्यांकन की प्रक्रिया उद्देश्यों की प्राप्ति एवं समग्र व्यक्तित्व के परिवर्तनों से है अर्थात् मूल्यांकन की प्रक्रिया में शिक्षक के शिक्षण की उपलब्धि, शिक्षण विधियों की सापेक्षता एवं छात्रों के अधिगम की सापेक्षिक उपलब्धि शामिल रहती है। शिक्षण विधियों की सापेक्षता एवं छात्रों के अधिगम की सापेक्षिक उपलब्धि शामिल रहती है।

5.2.1.2. मूल्यांकन की परिभाषा

मूल्यांकन की प्रक्रिया को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है-

1. वेस्ले एवं कार्टराइट के अनुसार, ''मूल्यांकन शिक्षा प्रक्रिया का वह अंग है, जिसके द्वारा इस बात की जाँच की जाती है कि एक निश्चित समय में शिक्षा में उद्देश्यों की पूर्ति कहाँ तक हुई है, उनके व्यवहार में कितना अन्तर आया तथा शिक्षक द्वारा इस दिशा में कहाँ तक सहयोग दिया गया।''

2. क्लार व स्टार के अनुसार, ''मूल्यांकन वह निर्णय या विश्लेषण है, जो किसी विद्यार्थी के विषय में प्राप्त सूचनाओं के आधार पर निकाला जाता है।''

3. माइकेलिस के विचार में- ''मूल्यांकन लक्ष्यों की प्राप्ति की सीमा को निर्धारित करने की प्रक्रिया है।''

4. कोठारी शिक्षा आयोग (1964-66) ने मूल्यांकन की अवधारण को स्पष्ट करते हुए लिखा कि-''मूल्यांकन एक अनवरत् या सतत् प्रक्रिया है। यह शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न अंग है, और शिक्षण लक्ष्यों से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि मूल्यांकन एक व्यापक प्रक्रिया है तथा शिक्षा का अभिन्न अंग है। सही मूल्यांकन द्वारा निम्न तथ्यों की प्राप्ति की जा सकती है।

1. शिक्षक को अपने निर्धारित उद्देश्यों में कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई।
2. विषगत उपलब्धि किस सीमा तक देखी गई।
3. शिक्षण विधियाँ विषय के ज्ञान प्रदान में कहाँ तक सहायक हुई।
4. शिक्षण के उपरान्त छात्रों में व्यवहारगत परिवर्तन कितना देखा गया।
5. शिक्षण संबंधी किन-किन बिन्दुओं में शिथिलताएँ एवं त्रुटियाँ हैं।
6. भावी शिक्षण के लिए किस प्रकार की तैयारी अपेक्षित है।

5.2.1.3. मूल्यांकन के उद्देश्य

शिक्षण प्रक्रिया में मूल्यांकन की स्थिति एवं महत्व की जानकारी के पश्चात् इसके उद्देश्यों का निर्धारण करना सहज हो जाता है। मूल्यांकन के प्रमुख उद्देश्यों हैं-

1. शिक्षक एंव छात्र दोनों को उनकी उपलब्धियों एवं विफलताओं से परिचित कराना जिससे वे उसी आधार पर अपने शिक्षण एवं अधिगम के क्रम में परिवर्तन ला सकें।
2. शिक्षक एवं छात्र दोनों का ही उचित मार्गदर्शन करते हुए उत्तम अधिगम के लिए प्रेरित करना।
3. पाठ्यवस्तु, एवं शिक्षण विधियों की उपयोगिता, अनुपयोगिता की परख करना।
4. छात्रों को उनकी व्यक्तिगत भिन्नता के आधार पर शिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध करना, क्योंकि मूल्यांकन की सहायता से ही छात्रों को वर्गीकृत किया जा सकता है तथा उसी के अनुसार उनके लिए शिक्षण की व्यवस्था की जा सकती है।

5. मूल्यांकन के द्वारा छात्रों को आत्माभिव्यक्ति अथवा आत्मप्रकाशन के अवसर प्रदान करना।
6. छात्रों एवं शिक्षकों को विषय के पुनराभ्यास हेतु अवसर प्रदान करना।
7. मूल्यांकन के आधार पर निदानात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण को प्रोत्साहित करना।

5.2.1.4. मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपान

शिक्षक के लिए मूल्यांकन के अंतर्गत निम्न सोपानों का अनुसरण करना अपेक्षित देखा जाता है-

1. शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण।
2. उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रस्तुत की गई परिस्थितियाँ।
3. विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन।
4. मूल्यांकन

1. शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण

सर्वप्रथम शिक्षक कक्षा में शिक्षण के प्रयोजन को स्पष्ट करते हुए उद्देश्यों को निर्धारित करता है। सामान्य उद्देश्य के अंतर्गत् भाषागत ज्ञानात्मक, कौशलात्मक, अभिवृत्तात्मक, सृजनात्मक पक्षों को ध्यान में रखते हुए उद्देश्यों निर्धारित किये जाते हैं। विशिष्ट उद्देश्यों के अंतर्गत छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों के रूप में शिक्षण-लक्ष्यों को निर्धारित किया जाता है। मूल्यांकन की प्रक्रिया यह सबसे महत्वपूर्ण पद माना जाता है।

2. उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रस्तुत की गई परिस्थितियाँ

इस पद में प्रमुख रूप से उन परिस्थितियों का उल्लेख किया जाता है, जिनके माध्यम से छात्र विषयगत जानकारी प्राप्त करते हैं, जैसे प्रयुक्त की गई शिक्षण विधियाँ, पाठ्यपुस्तक, सहायक सामग्री, समभाव उद्धहरण, प्रश्नोत्तर इत्यादि। अध्यापन में शिक्षण का यह प्रयास रहता है कि वह इस प्रकार की परिस्थितियाँ उत्पन्न करें जिससे उनसे शिक्षण द्वारा पूर्ण निर्धारित विशिष्ट उद्देश्य सफल देखे जा सकें।

1. विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन

शिक्षा के पश्चात् छात्रों के व्यवहार में होने वाले अपेक्षित परिवर्तन ही शिक्षक के शिक्षण की कसौटी होते हैं। दुसरे शब्दों में शिक्षक प्रयुक्त की गई परिस्थितियों के आधार पर होने वाले अपेक्षित परिवर्तन को देखते हुए अपनी उपलब्धि की मापन करता है।

2. मूल्यांकन

मूल्यांकन के अंतर्गत शिक्षक यह ज्ञात करता है कि उसके द्वारा प्रदत्ता ज्ञान छात्रों द्वारा कहाँ तक ग्रहण किया गया। इस प्रकार शिक्षण में मूल्यांकन की प्रक्रिया उद्देश्यों के निर्धारण से प्रारम्भ होकर अन्तिम पद

मूल्यांकन पर आकर समाप्त होती है। मूल्यांकन में यदि उपलब्धि आशा अनुकूल नहीं होती है तो शिक्षक पुन: उसके लिए नई शिक्षण रणनीतियाँ तैयार करता है तथा परिणाम में प्रभावात्मकता लाने का प्रयास करता है।

5.2.1.5. मूल्यांकन का स्वरूप

मूल्यांकन शब्द का अर्थ अधिक व्यापक अर्थ देता है और बालक की समस्त प्रगति की जाँच करने के प्रयोग में आता है। साथ ही साथ यह शिक्षण पर भी अपना प्रभाव डालता है और इसलिए इस पूरी प्रणाली को मूल्यांकन शिक्षण प्रणाली कहते है। इसका उद्देश्य परीक्षा में सुधार करने के साथ-साथ शिक्षण विधियों में भी सुधार करना है। इसका आधार यह है कि जितना पढ़ाया गया है उन सबकी जाँच हो और जिसकी जाँच की जाती है वह सब पढ़ाया गया हो। बालकों के सीखने के अनुभव बहुत महत्व रखते है और यदि उनको उचित अनुभव प्रदान नहीं किए गए तो परीक्षा किसकी होगी। शिक्षा का कार्य व्यापक रूप में बालकों में परिवर्तन लाना है। ये परिवर्तन उनके व्यवहार में तथा उनके आचारण में होंगे यह स्तर शारीरिक, मानसिक अथवा आत्मिक हो सकता है। व्यवहार परिवर्तन, बिना किसी शिक्षण के नहीं होता। शिक्षा द्वारा बालकों को अनुभव प्राप्त होते है और उन अनुभवों के आधार पर वह अपने व्यवहार को बदलता, सुधारता, परिवर्तित एवं संशोधित करता जाता है। यही नहीं वह अपने ज्ञान में वृद्धि करता जाता हैं और अपनी मानसिक शाक्तियों का प्रयोग करना, अपना व्यवहार उनसे निर्दिष्ट करता है। ये व्यवहार परिवर्तन इस बात के सूचक है कि अमुक व्यक्ति ने कितनी शिक्षा पायी है। व्यवहार परिवर्तन सीखने के अनुभवों के आधार पर होते है, अत: सीखने के अनुभव प्रुमख है।

मूल्यांकन बालकों की प्रगति भी जाँच ही नहीं करता बल्कि इसका संकेत देता है कि बालकों को पर्याप्त अनुभव दिए गए है अथवा नहीं, साथ ही साथ हमें यह भी स्पष्ट होता है कि हमारे उद्देश्य ठीक है या नहीं। उद्देश्य, सीखने के अनुभव व मूल्यांकन तीनों का समन्वय या मिलान ही मूल्यांकन शिक्षण का सार है।

अपनी प्रगति की जाँच - 1

1. मूल्यांकन के उद्देश्यों को स्पष्ट करें ?
2. मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपानों को बताइए ?

5.2.2. मूल्यांकन के प्रकार

भाषा शिक्षण में श्रवण, भाषण, पठन एवं लेखन को चार स्तम्भ के रूप में माना जाता है। अत: संस्कृत भाषा शिक्षण में भी इस चार भाषिक मूल्यों का छात्रों में विस्तार करना अनिवार्य है। अत: छात्रों की भाषिक क्षमता का मूल्यांकन के अन्तर्गत इन्हीं भाषिक मूल्यों का ही मूल्यांकन होता है एवं इसी से ही विशिष्ट उद्देश्यों की परिपूर्ति का मूल्यांकन भी सम्भव होता है।

सम्प्रति नूतन परीक्षा प्रणाली में सम्प्रत्ययों की संरचना ऐसी की जाती है कि जिसमें छात्रों को सुनिश्चित उत्तर देना आवश्यक है। इस परीक्षा में विषय निष्ठता का अन्तर्भूक्त होते हुए निष्पक्ष मूल्यांकन होता है एवं परीक्षण की वैधता एवं विश्वसनीय अबाधिक रहती है। प्रश्न पत्र के निर्माण के समय इस प्रकार के प्रश्नों का समावेश किया जा सकता है। जैसे कि- बहुविकल्पीय प्रश्न, रिक्तस्थान पूर्ति, सत्यासत्य चयन प्रत्यभिस्मरणात्मक प्रश्न, योजनात्मक प्रश्न आदि होते है।

भाषा के मूल चार उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए संस्कृत भाषा की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए मूल्यांकन की कई विधियाँ अपनायी जानी चाहिए। संस्कृत भाषा में पठन एवं उच्चारण का विशेष महत्व है एवं वर्तमान परीक्षा प्रणाली लिखित परीक्षा का सर्वाधिक प्रचलन है। अत: संस्कृत भाषा का मूल्यांकन दो प्रकार से होनी चाहिए।

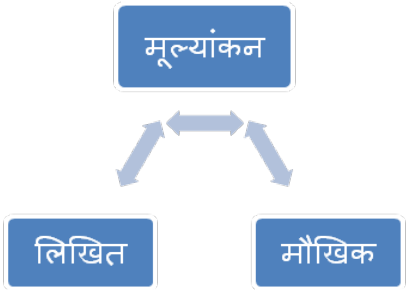

5.2.2.1. लिखित परीक्षा

अध्यापन का उद्देश्य किस प्रमाण में पूर्ति हुआ है एवं छात्रों का अधिगम किस सीमा तक हुआ है, यह जानने के लिए लिखित परीक्षा की आवश्यकता है, यहाँ लिखित मूल्यांकन सतत मूल्यांकन की प्रक्रिया है, क्योंकि घटक परीक्षा अर्द्धवार्षिक एवं वार्षिक परीक्षा के द्वारा छात्र का मूल्यांकन सतत रूप से किया जाता है। इस लिखित परीक्षा में तीन प्रकार के प्रश्नों का विशेष रूप से समावेशित किया जाता है। जैसे कि निबंधात्मक प्रश्न लघुत्तरीय प्रश्न एवं वस्तुनिष्ट प्रश्न।

1. निबन्धात्मक प्रश्न

यह प्रश्न छात्र का शब्दा शाक्ति भाषा ज्ञान एवं प्रयोग सामर्थ्य को स्पष्ट करता है। इस प्रश्न से छात्रों के चिन्तन स्तर की क्षमता को भी जाँचा जा सकता है। निबन्धात्मक प्रश्न में ही छात्र का वैचारिक दिशा अध्यापक जानने में समर्थ होता है। इस प्रश्न के उत्तर के लिए छात्रों को दस या पन्द्रह से ज्यादा वाक्यों के द्वारा स्वअधिगम विषयों को उपस्थापन करना पड़ता है।

2. लघुत्तरीय प्रश्न

आजकल कुछ विद्वान लघुत्तरीय प्रश्न को अधिक श्रेष्ठ मानते है। यह प्रश्न छोटे होते है इनका उत्तर एक दो शब्द या अधिक से अधिक एक दो वाक्यों में होता है। इन्हीं प्रश्नों का मूल्यांकन विश्वसनीय एवं वैध होता है।

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न निश्चित, स्पष्ट एवं संक्षिप्त उत्तर वाले होते है। इनमें विश्वसनीयता आता एवं वैधता सबसे अधिक होती है परन्तु विचार गुणों का मूल्यांकन करने में असमर्थ होते है। बहुविश्वनीय प्रश्न, सत्य-असत्य प्रश्न, हॉ नहीं, प्रश्न रिक्त स्थान पूर्ति, प्रश्न मेलान प्रकार प्रश्न आदि प्रश्न वस्तुनिष्ठ प्रश्न के अन्तगर्त आते है।

घटक परीक्षा

विशिष्ट घटक का अध्यापन के पश्चात अध्यापन का उद्देश्य किस सीमा तक प्राप्त हुआ है इसका बोध करने के लिए शिक्षक घटक परीक्षा का आयोजन करता है। प्रत्येक घटक के अध्यापन के पश्चात शिक्षक उपरोन्त प्रश्नों के प्रकार के आधार से परीक्षक का आयोजन करता है।

अर्द्धवार्षिक परीक्षा

घटक परीक्षावत शिक्षक पाठ्यक्रम का अर्द्धभाग का अध्यापन सम्पन्न के पश्चात पाठ्यक्रम में निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति को जाँचने के लिए तथा दी जा रही शिक्षणानुभवों की वैधता या आवश्यक सुधार को परखने के लिए उपरोक्त प्रश्न प्रकारों के आधार से परीक्षण का आयोजन करता है।

वार्षिक परीक्षा-

सत्र के अन्त में निर्धारित कालावधि के लिए उद्देश्यों की पूर्ति की जाँच के लिए इस परीक्षा का आयोजन किया जाता। इस परीक्षा के द्वारा छात्रों का विशिष्ट कालावधि की उपलब्धि का परीक्षण किया जाता है। इसको उपलाब्धि परीक्षण के नाम से भी जाना जाता है।

परीक्षण निर्माण के सोपान –

1. प्रश्नपत्र का स्वरूप निर्धारण (डिजाइन)
2. प्रश्न पत्र का प्रारूप तैयार करना (ब्लू प्रिन्ट)
3. प्रश्न पत्र का सम्पादन करना (Editing)
4. उत्तर सूची व अंकतालिका तैयार करना (Answer key)
5. प्रश्न विश्लेषण (Question Analysis)

5.2.2.2. मौखिक परीक्षा

मौखिक परीक्षा का वर्तमान परीक्षा प्रणाली में कोई स्थान नहीं है। नवीन मूल्यांकन प्रविधियों में भी भाषा के इस पक्ष की उपेक्षा की गयी है, किन्तु यह उपेक्षा वांछनीय नहीं है। मौखिक परीक्षा के द्वारा उच्चारण की शुद्धता, मौखिक आत्मप्रकाशन की क्षमता तथा दूसरों के विचारों को सुनकर समझने की योग्यता आदि योग्यता की जाँच हो सकती है।

संस्कृत भाषा शिक्षण मूल्यांकन में लिखित परीक्षा का जितना महत्व है उतना ही अनिवार्यतः मौखिक परीक्षा अत्यन्त आवश्यक है। मौखिक परीक्षा में श्रवण, वाचन, कथन इस तीन प्रकार की क्षमताओं का मूल्यांकन किया जाता है। श्रवण क्षमता के मूल्यांकन में अध्यापित विषयों का बोध, सकंल्पना, पाठ्यांसों का अन्तर्निहित मूल्यों का मौखिक प्रश्नों के माध्यम से किया जाता है।

वाचन क्षमता का मूल्यांकन की दृष्टि से वाचन की गति शुद्ध उच्चारण, स्वाभाविकता एवं कविता का लय, भाव के अनुसार वाचन का परीक्षण किया जा सकता है। कथन क्षमता का मूल्यांकन की दृष्टि से कथा-कथन, चित्रवर्णन, घटना वर्णन, सम्भाषण आदि के द्वारा परीक्षण किया जा सकता है। उपर्युक्त मौखिक परीक्षाओं का निम्नलिखित रीति से प्रबन्ध कर सकते हैं।

01. छात्रों को संस्कृत गद्यांश या उन्हीं के स्तर का कोई श्लोक पढ़कर सुनाने और उनसे उसका भाव लिखने के लिए करना।
02. किसी गद्यांश या श्लोक को छात्रों द्वारा पढ़वाकर उच्चारण की जाँच हो सकता है।
03. अध्यापक संस्कृत में किसी विषय पर बोले और छात्रों से उसका सारांश लिखने को कहे।
04. श्रुतलेख लिखाना।
05. मौखिक रूप से कुछ प्रश्नों का उत्तर देने के लिए छात्रों के समक्ष प्रश्न प्रस्तुत करना।
06. पाठ्य-पुस्तक में पढ़े हुए किसी गद्य खण्ड या श्लोक के सारांश को मातृ भाषा या संस्कृत में कहलाना।
07. किसी विषय पर संस्कृत में छात्रों से भाषण देने को कहना।
08. परीक्षा में केवल पाठ्य-सामग्री के हिन्दी अनुवाद पर ही बल न दिया जाय बल्कि प्रश्नोत्तर, वाक्य, रिक्त-स्थानों की पूर्ति, शब्दों का वाक्यों में प्रयोग, अशुद्ध-शुद्ध आदि पर होने चाहिए।
09. पाठ्यवस्तु होने पर ऐसे प्रश्न हो जिनसे बच्चों को पूर्ण पुस्तक पढ़ने की आकांक्षा हो और पुस्तक की इन बातों का स्मरण रखने की प्रेरणा मिले।
10. व्याकरण की परीक्षा में शब्द और धातुरूप ही न पूछे जायें बल्कि प्रयोग तथा उनकी विभाक्तित आदि का ज्ञान पूछा जाए।
11. कंठस्थ श्लोकों पर भी प्रश्न आधारित हो।

5.2.2.3. उत्तम परीक्षण के गुण

एक अच्छे मूल्यांकन की प्राय: निम्निलिखित विशेषताएँ बताई जाती हैं-

1. **वैधता** – जिस उद्देश्य का मूल्यांकन करना हो, उस उद्देश्य का यदि मूल्यांकन हो जाता है तो उन साधनों को वैध साधन कहा जाता है जिनके आधार पर मूल्यांकन होता है।
2. **विश्वसनीयता** – छात्रों द्वारा प्राप्त अंकों में विचलन नहीं होता और चाहे जब पुनर्मूल्यांकन जाय, अंक प्राय: एक समान रहते है।
3. **वस्तुनिष्ठता** –परीक्षण की रुचियों, भावनाओं आदि का मूल्यांकन पर प्रभाव नहीं पड़ता। यह पक्षपात सहित होता है। उत्तरों के आधार पर ही मूल्यांकन होता है, न कि परीक्षण के दृष्टिकोण के आधार पर।
4. **व्यापकता-** परीक्षण का क्षेत्र संकुचित नहीं होता है। पाठ्यक्रम के सम्पूर्ण अंश की परीक्षा की जाती है।
5. **उपयोगिता** –एक अच्छा मूल्यांकन जीवन से सम्बन्धित होता है। यह व्यावहारिक होता है और उसका शिक्षण एवं जीवन में उपयोग किया जा सकता है।
6. **विभेदीकरण** –मूल्यांकन में सक्षम और अक्षम छात्रों में भेद कर सकने की समर्थ होनी चाहिए।

5.2.2.4. मूल्यांकन में ध्यान देने योग्य बातें

भाषा में मूल्यांकन बालकों के भाषा सम्बन्धी समस्त ज्ञान की जाँच करता है। शिक्षकों को चाहिए भाषा-शिक्षण के संम्बध में अपने उद्देश्यों को निर्धारित करें तत्पश्चात उनकी व्यवहार परिवर्तनों के रूप में व्याख्या करके सीखने के अनुभवों का आयोजन करें और फिर ऐसे प्रश्न बनाए जिनसे उनकी पूरी-पूरी जाँच हो सके, तभी मूल्यांकन उचित होगा और बालकों की प्रगति की जाँच के साथ-साथ वह शिक्षकों के लिए भी अपनी कार्यक्षमता की जाँच करने का साधन होगा।

संस्कृत शिक्षण में मूल्यांकन के क्षेत्र में निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं –

1. मूल्यांकन व्यापक होना चाहिए जिससे भाषा भी सभी पक्षों एवं योग्यताओं की जाँच की जाए।
2. सैद्धान्तिक विषयों के साथ-साथ विविध अभ्यासात्मक कार्यो तथा व्यावहारिक क्रियाओं का भी मूल्यांकन किया जाए। जैसे पत्र-पत्रिकाएँ और अतिरिक्त पुस्तकें पढ़ना प्राप्त हुई विषय-समग्री पर कक्षा में चर्चा करना, कथा एवं श्लोकों का संकलन करना, भाषा शिक्षण विषयक द्रव्य दृश्य उपकरणों का निर्माण करना चाहिए।
3. मूल्यांकन में मौखिक परीक्षा को भी अनिवार्य रूप से स्थान दिया जाए, की शुद्ध उच्चारण और शब्दों के सही प्रयोग पर होना चाहिए।
4. मूल्यांकन सतत होना चाहिए। प्रत्येक पाठ को पढ़ाने के पश्चात उसका मूल्यांकन किया जाए। सम्प्राप्ति मूल्यांकन के निष्कर्षों के आधार पर निदानात्मक परीक्षण किया जाए और उपचारात्मक अभास करवाय जाए।

5. भाषिक ज्ञान समुन्नयन और शिक्षण पद्धति के लिए आन्तरिक और नाट् मूल्यांकन दोनों को यधोचित स्थान दिया जाए। सत्रीय कार्य का मूल्यांकन वर्ष भर समान रूप से होना चाहिए।

अपनी प्रगति की जाँच - 1

1. उत्तम परीक्षण के गुण स्पष्ट करें ?
2. लिखित परीक्षा के घटकों को स्पष्ट करें ?

5.3. सारांश

मूल्यांकन एक व्यापक प्रक्रिया है तथा शिक्षा का अभिन्न अंग है। 'मूल्यांकन' शब्द बहुत व्यापक है, इसका सम्बन्ध केवल परीक्षा से नहीं है, वरन् इसके अंतगर्त मापन और परीक्षा दोनों सम्मिलित हैं। शिक्षक के लिए मूल्यांकन के अंतर्गत शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण, उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रस्तुत की गई परिस्थितियाँ, विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन, मूल्यांकन आदि सोपानों का अनुसरण करना अपेक्षित देखा जाता है। संस्कृत भाषा में पठन एवं उच्चारण का विशेष महत्व है और वर्तमान परीक्षा प्रणाली में लिखित परीक्षा का सर्वाधिक प्रचलन है। अतः संस्कृत भाषा शिक्षण में लिखित मौखिक दोनों प्रकारों का प्रचलन है। अध्यापन का उद्देश्य किस प्रमाण में पूर्ति हुआ है एवं छात्रों का अधिगम किस सीमा तक हुआ है, यह जानने के लिए लिखित परीक्षा की आवश्यकता है, एवं लिखित मूल्यांकन सतत मूल्यांकन की प्रक्रिया है। मौखिक परीक्षा के द्वारा उच्चारण की शुद्धता, मौखिक आत्मप्रकाशन की क्षमता तथा दूसरों के विचारों को सुनकर समझने की योग्यता को योग्यता की जाँच हो सकती। एक अच्छे मूल्यांकन की प्राय: वैधता, विश्वसनीयता, वस्तुनिष्ठता, व्यापकता, उपयोगिता, विभेदीकरण आदि विशेषताएँ बताई जाती हैं।

5.4. अपनी प्रगती की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

अपनी प्रगति की जाँच –

उत्तर -अध्याय 5.2 देखे।

5.5. शब्दावली

विश्वसनीयता – यदि किसी परीक्षण को बार बार प्रयुक्त किया जाय और बार-बार समान प्राप्तांक प्राप्त हों तो परीक्षण को विश्वसनीय कहा जाता है।

वैधता – यदि कोई परीक्षण उसका मापन करता है जिसके लिए उसे बनाया गया है तो परीक्षण को वैध कहा जायेगा।

वस्तुनिष्ठता – परीक्षण की वह फलांकन विधि जिस से परीक्षण के पक्षपातों और भावनाओं का प्रभाव न पडे तथा साथ ही साथ परीक्षणकर्ता की मनोदशा और अभिवृत्तियों आदि का प्रभाव भी फलांकन पर नहीं पडता है।

5.6. कार्य आवंटन

1. मूल्यांकन की परिभाषा लिखें।
2. मूल्यांकन मे वरताजाने वाले सावधिनियां उल्लेख करें।

5.7. क्रियाएं

1. उत्तम परीक्षा के गुणों को स्पष्ट करें।
2. मूल्यांकन का अर्थ एवं स्वरूप को वर्णन करें।

5.8. प्रकरण अध्ययन (केस स्टडी)

1. मूल्यांकन के संप्रयत्य का सविस्तार वर्णन करें।
2. मूल्यांकन के प्रकारों का वर्णन करे।

5.9. संदर्भ पुस्तके

01. सक्सेना, राधारानी (2013) " नवाचारी शिक्षण पद्धतियाँ" जयपुर, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी।
02. गुप्त, मनोरमा – भाषा अधिगम, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा
03. गुनानंद, - हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
04. द्विवेदी, देवीशंकर – भाषा और भाषिकी, भाषा-विज्ञान-विभाग, सागर वि.वि, सागर
05. पांडेय, रामशकल –हिन्दी शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा
06. चतुर्वेदी, शिखा – हिन्दी शिक्षण, आरलाल बुक डिपो., मेरठ
07. शर्मा, देवेन्द्रनाथ – भाषा विज्ञानं की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
08. तिवारी, भोलानाथ, भाषा विज्ञान, चौखम्बा प्रकाशन, वारणासी
09. शर्मा, लक्ष्मनाराय़ण, सिंह फतेह, संस्कृत शिक्षणं नवीन प्रविधयः,आदित्य प्रकाशन, जयपुर
10. मित्तल, संतोष, संस्कृत शिक्षणम, नवचेतना पव्लिकेशन्स, जयपुर
11. सफाया, रघुनाथ, संस्कृत शिक्षण, हरयाणा ग्रन्थ अकादमी
12. पाण्डेय, रामशकल, संस्कृत शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
13. विश्वासः, कौशलबोधिनि, संस्कृत भारती, दिल्ली
14. शर्मा, मुरलीधर, संस्कृत शिक्षण समस्या, रा.सं.सं विद्यापीठ, तिरूपति

15. सिंह, कर्ण, संस्कृत शिक्षण विधि, एच. पि.भार्गव बुक सेंटर, आगरा

निवेदन-

विगत कुछ वर्षों से सेवारत शिक्षकों के लिए अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम उथल पुथल के दौर से गुजरा है। इस संदर्भ में नयी पाठ्यचर्या को लागू करना और उसके अनुसार समय की सीमा के अन्तर्गत अध्येताओं को सामग्री उपलब्ध करवाना एक चुनौती भरा कार्य था। इस चुनौती को जिन लेखकों और संकलनकर्ताओं की मदद से सुगम किया गया, वे सब बधाई के पात्र हैं। प्रत्येक अध्ययन सामग्री में जिन मूल पुस्तकों का सहयोग लिया गया है, उनका यथासंभव संदर्भ ग्रन्थों के रूप में उल्लेख किया गया है। लेखक और संकलनकर्ता मूल ग्रन्थों के लेखकों के उद्यम और बौद्धिक सक्रियता का सम्मान करते हैं और इनके प्रति आभार ज्ञापित करते हैं। यदि यह ज्ञात होता है कि किसी मूल ग्रन्थ का नामोल्लेख रह गया है तो उसे भी हम साभार सम्मिल्लित करेंगे। पाठकों से अनुरोध है कि वे अपना फीडबैक उपलब्ध कराते रहे जिससे इस सामग्री को उत्तरोत्तर गुणवत्ता संपन्न किया जा सके।